وَقَالَتِ ٱلۡيَهُودُ لَيۡسَتِ ٱلنَّصَٰرَىٰ عَلَىٰ شَيۡءٖ وَقَالَتِ
ٱلنَّصَٰرَىٰ لَيۡسَتِ ٱلۡيَهُودُ عَلَىٰ شَيۡءٖ وَهُمۡ يَتۡلُونَ ٱلۡكِتَٰبَۗ
كَذَٰلِكَ قَالَ ٱلَّذِينَ لَا يَعۡلَمُونَ مِثۡلَ قَوۡلِهِمۡۚ فَٱللَّهُ يَحۡكُمُ
بَيۡنَهُمۡ يَوۡمَ ٱلۡقِيَٰمَةِ فِيمَا كَانُواْ فِيهِ يَخۡتَلِفُونَ ١١٣ وَمَنۡ أَظۡلَمُ
مِمَّن مَّنَعَ مَسَٰجِدَ ٱللَّهِ أَن يُذۡكَرَ فِيهَا ٱسۡمُهُۥ وَسَعَىٰ فِي
خَرَابِهَآۚ أُوْلَٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمۡ أَن يَدۡخُلُوهَآ إِلَّا خَآئِفِينَۚ لَهُمۡ
فِي ٱلدُّنۡيَا خِزۡيٞ وَلَهُمۡ فِي ٱلۡأٓخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٞ ١١٤ وَلِلَّهِ
ٱلۡمَشۡرِقُ وَٱلۡمَغۡرِبُۚ فَأَيۡنَمَا تُوَلُّواْ فَثَمَّ وَجۡهُ ٱللَّهِۚ إِنَّ ٱللَّهَ وَٰسِعٌ
عَلِيمٞ ١١٥ وَقَالُواْ ٱتَّخَذَ ٱللَّهُ وَلَدٗاۗ سُبۡحَٰنَهُۥۖ بَل لَّهُۥ مَا فِي
ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَٱلۡأَرۡضِۖ كُلّٞ لَّهُۥ قَٰنِتُونَ ١١٦ بَدِيعُ ٱلسَّمَٰوَٰتِ
وَٱلۡأَرۡضِۖ وَإِذَا قَضَىٰٓ أَمۡرٗا فَإِنَّمَا يَقُولُ لَهُۥ كُن فَيَكُونُ ١١٧
وَقَالَ ٱلَّذِينَ لَا يَعۡلَمُونَ لَوۡلَا يُكَلِّمُنَا ٱللَّهُ أَوۡ تَأۡتِينَآ ءَايَةٞۗ
كَذَٰلِكَ قَالَ ٱلَّذِينَ مِن قَبۡلِهِم مِّثۡلَ قَوۡلِهِمۡۘ تَشَٰبَهَتۡ قُلُوبُهُمۡۗ
قَدۡ بَيَّنَّا ٱلۡأٓيَٰتِ لِقَوۡمٖ يُوقِنُونَ ١١٨ إِنَّآ أَرۡسَلۡنَٰكَ بِٱلۡحَقِّ بَشِيرٗا
وَنَذِيرٗاۖ وَلَا تُسۡـَٔلُ عَنۡ أَصۡحَٰبِ ٱلۡجَحِيمِ ١١٩ وَلَن تَرۡضَىٰ
عَنكَ ٱلۡيَهُودُ وَلَا ٱلنَّصَٰرَىٰ حَتَّىٰ تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمۡۗ قُلۡ إِنَّ هُدَى
ٱللَّهِ هُوَ ٱلۡهُدَىٰۗ وَلَئِنِ ٱتَّبَعۡتَ أَهۡوَآءَهُم بَعۡدَ ٱلَّذِي جَآءَكَ
مِنَ ٱلۡعِلۡمِ مَا لَكَ مِنَ ٱللَّهِ مِن وَلِيّٖ وَلَا نَصِيرٍ ١٢٠ ٱلَّذِينَ

ءَاتَيْنَٰهُمُ ٱلْكِتَٰبَ يَتْلُونَهُۥ حَقَّ تِلَاوَتِهِۦٓ أُو۟لَٰٓئِكَ يُؤْمِنُونَ
بِهِۦ ۗ وَمَن يَكْفُرْ بِهِۦ فَأُو۟لَٰٓئِكَ هُمُ ٱلْخَٰسِرُونَ ﴿١٢١﴾

Theme	
Religious prejudice of the Jews and the Christians. Order not to prevent people from coming to the Masjid. All directions belong to Allah. The accusation against Allah of having a son. The Qur'an is the knowledge of truth. Jews and Christians will never be pleased with you.	यहूदियों और ईसाइयों का मज़हबी तअस्सुब। लोगों को मस्जिद में आने से रोकने की ममनाअत का हुक्म। तमाम सम्तें अल्लाह ही की हैं। अल्लाह पर बेटा होने का इल्ज़ाम। क़ुरआन हक़ का इल्म है। यहूदी और ईसाई कभी भी तुम से राज़ी नहीं होंगे।
Tarjumani	
The Jews say: "The Christians are not on the right track," and the Christians say: "It is the Jews who are not on the right track," yet, both read their Holy Books (Torah or Gospel). And those who have no knowledge (the pagan Arabs) say like to what both of them say, so Allah will judge between them in their dispute on the Day of Judgment. Who is more unjust than the one who prevents people from the Masajid (mosques) of Allah, and to	यहूदी कहते हैं, "ईसाइयों के पास कुछ नहीं |" ईसाई कहते हैं, "यहूदियों के पास कुछ नहीं" -- हालाँकि दोनों ही किताब पढ़ते हैं— और इसी क़िस्म के दावे उन लोगों के भी हैं जिनके पास किताब का इल्म नहीं है | ये इखतिलाफ़ात जिनमें ये लोग मुब्तला हैं, इनका फ़ैसला अल्लाह क़ियामत के रोज़ कर देगा | और उस शख्स से बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह के माबुदों में उसके नाम की याद से रोके और उनकी वीरानी के दरपै हो? ऐसे लोग इस काबिल हैं कि इन इबादतगाहों में

mention His name therein, and strives to ruin them? It is not proper for such people to enter them except with fear. For them there is disgrace in this world and grievous punishment in the Hereafter. To Allah belong the East and the West; whichever direction you turn your face, you will face Allah. Surely, Allah is All-Embracing and All-Knowing. They say: "Allah has taken to Himself a son;" Allah is above such things! Rather, to Him belongs all that is in the heavens and in the earth; all are obedient to Him. He is the Originator of the heavens and the earth! When He decrees a thing, He needs only to say, "Be," and there it becomes. Those who have no knowledge ask: "Why does Allah not speak to us face to face or send us a sign?" The same demand was made by those before them: they all have the same mentality. We have already shown clear signs to those whose faith is firm. What clearer sign could there	क़दम न रखें और अगर वहाँ जाएँ भी तो डरते हुए जाएँ | उनके लिए तो दुनिया में रुसवाई है और आख़िरत में अज़ाबे-अज़ीम | मशरिक और मग़रिब सब अल्लाह के हैं जिस तरफ़ भी तुम रुख करोगे उसी तरफ़ अल्लाह का रुख है | अल्लाह बड़ी वुसअतवाला और सब कुछ जाननेवाला है | उनका कौल है कि अल्लाह ने किसी को बेटा बनाया है | अल्लाह पाक है इन बातों से | अस्ल हकीक़त यह है कि ज़मीन और आसमानों की तमाम मौजूदात उसकी मिल्क हैं, सब के सब उसके मुतिए-फ़रमान हैं, वह आसमानों और ज़मीन का मूजिद है, और जिस बात का वह फ़ैसला करता है, उसके लिए बस यह हुक्म देता है कि "हो जा", और वह हो जाती है | नादान कहते हैं कि अल्लाह ख़ुद हमसे बात क्यों नही करता या कोई निशानी हमारे पास क्यों नहीं आती? ऐसी ही बातें इनसे पहले लोग भी किया करते थे | इन सब (अगले-पिछले गुमराहों) की ज़ेहनियतें एक जैसी हैं | यक़ीन लानेवालों के लिए तो हम निशानियाँ साफ़-साफ़ नुमायाँ कर चुके हैं | (इससे बढ़कर निशानी क्या होगी कि) हमने तुमको इल्मे-हक़ के साथ

be than this Book? We have sent you (O Muhammad) with the Truth (Al-Islam) and made you the bearer of good news and warning: now, you will not be called upon to answer about the actions of the companions of the blazing fire. The Jews and the Christians will never be pleased with you, until you follow their faith. O Muhammad, tell them: "Allah's guidance is the only guidance;" and if after all the knowledge you have received, you yield to their desires, there shall be none to protect you or help you from the wrath of Allah. Those to whom We have given the book and who read it as it ought to be read, they are the ones who believe in it, as for those who reject it, they are for sure the losers.	खुशखबरी देनेवाला और डरानेवाला बनाकर भेजा | अब जो लोग जहन्नम से रिश्ता जोड़ चुके हैं, उनकी तरफ़ से तुम ज़िम्मेदार और ज़वाबदेह नहीं हो | यहूदी और ईसाई तुमसे हरगिज़ राज़ी न होंगे जब तक तुम उनके तरीक़े पर न चलने लगो | साफ़ कह दो कि रास्ता बस वही है जो अल्लाह ने बताया है, वरना अगर उस इल्म के बाद, जो तुम्हारे पास आ चुका है, तुमने उनकी खाहिशात की पैरवी की, तो अल्लाह की पकड़ से बचानेवाला कोई दोस्त और मददगार तुम्हारे लिए नहीं है | जिन लोगों को हमने किताब दी है, वे उसे उस तरह पढ़ते हैं जैसा कि पढ़ने का हक़ है | वे इस (क़ुरआन) पर सच्चे दिल से ईमान ले आते हैं | और जो इसके साथ कुफ़्र का रवैया इख़तियार करें, वही अस्ल में नुकसान उठानेवाले हैं |
Tafsir	
The Jews say, 'The Christians have nothing to stand on,' and the Christians say, 'The Jews have nothing to stand on,' yet they both	**यहूदी कहते हैं: "ईसाइयों के पास कोई बुनियाद नहीं", और ईसाई कहते हैं: "यहूदियों के पास कोई बुनियाद नहीं", हालाँकि दोनों ही**

recite the Book. Those who do not know say the same as they say. Allah will judge between them on the Day of Rising regarding the things about which they differ. [2:113]	**किताब की तिलावत करते हैं। जो लोग इल्म नहीं रखते वे भी यही बात कहते हैं। अल्लाह क़ियामत के दिन उनके दरमियान उन उमूर के बारे में फ़ैसला फ़रमाएगा जिनमें वे इख़्तिलाफ़ करते हैं। [2:113]**
The Jews say, 'The Christians have nothing to stand on,' and the Christians say, 'The Jews have nothing to stand on,' yet they both recite the Book.	**यहूदी कहते हैं: "ईसाइयों के पास कोई बुनियाद नहीं", और ईसाई कहते हैं: "यहूदियों के पास कोई बुनियाद नहीं", हालाँकि दोनों ही किताब की तिलावत करते हैं।**
Each of them claims that the other group have nothing and that they are more entitled to mercy than them. 'The Book' means the Torah and the Gospel.	उनमें से हर एक यह दावा करता है कि दूसरा समूह कुछ भी नहीं रखता और यह कि वे स्वयं उनके मुक़ाबले में रहमत के ज़्यादा हक़दार हैं। "किताब" से मुराद तौरात और इंजील हैं।
Those who do not know say the same as they say.	**जो लोग इल्म नहीं रखते वे भी वही बात कहते हैं जो ये कहते हैं।**
'Those who do not know' are said by the majority to be the unbelieving Arabs because they had no Book. 'Aṭā' said that what is meant are the nations before the Jews and Christians. Ar-Rabī' ibn Anas said that it means: 'That is what the Jews	अकसरियत के नज़दीक "जो लोग इल्म नहीं रखते" से मुराद वे अरब मुशरिक हैं जिनके पास कोई आसमानी किताब नहीं थी। अता़ ने कहा कि इससे मुराद वे क़ौमें हैं जो यहूदियों और ईसाइयों से पहले गुज़र चुकी हैं। रबीअ बिन अनस़ ने कहा

said before the Christians.'	कि इसका मतलब यह है: "यह वही बात है जो यहूदियों ने ईसाइयों से पहले कही थी।"
Ibn 'Abbās said that the reason for the revelation of this āyah was that some Christians of Najrān came to the Prophet ﷺ and the Jewish rabbis also came and they argued in the presence of the Prophet ﷺ; each said this about the other.	इब्न अब्बास ने बयान किया कि इस आयत के नुज़ूल का सबब यह था कि नज्रान के कुछ ईसाई नबी ﷺ के पास आए और यहूदी उलमा भी आए, और उन्होंने नबी ﷺ की मौजूदगी में आपस में बहस की; हर एक दूसरे के बारे में यही बात कह रहा था।
Who could do greater wrong than someone who bars access to the mosques of Allah, preventing His name from being remembered in them, and goes about destroying them? Such people will never be able to enter them – except in fear. They will have disgrace in this world and in the Next World they will have a terrible punishment. [2:114]	**उस शख़्स से बढ़कर ज़ालिम कौन हो सकता है जो अल्लाह की मस्जिदों में दाख़िले से रोके, उनमें अल्लाह के नाम के ज़िक्र को मना करे, और उनकी वीरानी में लगा रहे? ऐसे लोग उनमें दाख़िल नहीं हो सकेंगे मगर ख़ौफ़ के साथ। उनके लिए दुनिया में रुसवाई है और आख़िरत में उनके लिए सख़्त अज़ाब है। [2:114]**
Who could do greater wrong than someone who bars access to the mosques of Allah, preventing His Name from being remembered in	**उस शख़्स से बढ़कर ज़ालिम कौन हो सकता है जो अल्लाह की मस्जिदों में आने से रोके, उनमें अल्लाह के नाम के ज़िक्र को होने न दे?**

them,	
By 'mosques' here Allah means either Jerusalem and the area around it or the Ka'bah. The plural is used to honour the mosque because it is the *qiblah* for all other mosques. It is also said that what is meant are all mosques.	यहाँ "मस्जिदों" से अल्लाह की मुराद या तो बैतुल-मक़दिस और उसके इर्द-गिर्द का इलाक़ा है या काबा। जमा का सिग़ा इसलिए इस्तेमाल किया गया है कि इस मस्जिद को शरफ़ हासिल है, क्योंकि वह तमाम दूसरी मस्जिदों के लिए क़िब्ला है। यह भी कहा गया है कि इससे मुराद तमाम मस्जिदें हैं।
People disagree about what is meant by this *āyah* and about whom it was revealed. Some commentators said that it was revealed about Nebuchadnezzar because he destroyed Jerusalem. Ibn 'Abbās and others say that it was revealed about the Christians and it means, 'How, Christians, can you claim to be people of the Garden when you laid waste to Jerusalem and prevented those who pray from praying in it?' In that case the sense of the *āyah* would be astonishment at what the Christians did to Jerusalem, in spite of their esteem for it, and that they did what they did out of their	लोगों के दरमियान इस आयत के मफ़हूम और इसके नुज़ूल के बारे में इख़्तिलाफ़ है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने कहा कि यह बख़्त-नस्र (नबूक़दनज़र) के बारे में नाज़िल हुई, क्योंकि उसने बैतुल-मक़दिस को तबाह किया था। इब्न अब्बास ॓ और दूसरे हज़रात का कहना है कि यह ईसाइयों के बारे में नाज़िल हुई, और इसका मफ़हूम यह है: "ऐ ईसाइयो! तुम जन्नत के लोग होने का दावा कैसे कर सकते हो, हालाँकि तुमने बैतुल-मक़दिस को वीरान किया और वहाँ इबादत करने वालों को इबादत से रोका?" इस सूरत में आयत का मफ़हूम इस बात पर तअज्जुब का इज़हार है कि ईसाइयों ने बैतुल-मक़दिस के साथ क्या सुलूक किया,

animosity towards the Jews. It is related that this devastation remained until the time of ‘Umar. It is said that it was revealed about the idolaters when they prevented the worshippers and the Prophet ﷺ from reaching the Sacred Mosque in the year of al-Ḥudaybiyyah. It is said that what is meant is anyone who bars access to any mosque until the Day of Rising. That is sound because the expression is general, and Allah knows best.	हालाँकि वे उसकी ताज़ीम करते थे, और यह कि उन्होंने यह सब यहूदियों के साथ दुश्मनी की बिना पर किया। रिवायत है कि यह वीरानी हज़रत उमरؓ के ज़माने तक बाक़ी रही। यह भी कहा गया है कि यह आयत मुशरिकीन के बारे में नाज़िल हुई, जब उन्होंने इबादत-गुज़ारों और रसूलुल्लाह ﷺ को सुल्ह-ए-हुदैबिया के साल मस्जिद-ए-हराम तक पहुँचने से रोका था। यह भी कहा गया है कि इससे मुराद हर वह शख़्स है जो क़ियामत के दिन तक किसी भी मस्जिद में दाख़िले से रोके। यह राय दुरुस्त है, क्योंकि आयत का उस्लूब आम है, और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
The destruction of mosques can be actual, like the destruction wrought by Nebuchadnezzar on Jerusalem and also by the Christians when they attacked the tribe of Israel under one of their emperors (possibly Vespasian). They slaughtered the people, looted the city, burned the Torah, and put excrement in the Temple and destroyed it. But it can also have a metaphorical meaning,	मस्जिदों की तबाही हक़ीक़ी भी हो सकती है, जैसे बख़्त-नस्र के हाथों बैतुल-मक़दिस की तबाही, और इसी तरह ईसाइयों के हाथों, जब उन्होंने अपने एक बादशाह (मुमकिन है वेस्पासियन) के दौर में बनी इस्राईल पर हमला किया। उन्होंने लोगों को क़त्ल किया, शहर को लूटा, तौरात को जला दिया, हैकल में गंदगी डाली और उसे तबाह कर दिया। लेकिन इसका एक मज़ाज़ी मफ़हूम भी हो सकता है, जैसे मुशरिकीन का

as the idolaters prevented the Messenger of Allah ﷺ from reaching the Sacred House. Or in general, it could mean letting mosques fall into disuse.	रसूलुल्लाह ﷺ को बैतुल्लाह तक पहुँचने से रोकना। या उमूमी तौर पर इससे मुराद यह भी हो सकती है कि मस्जिदों को बेकार और वीरान छोड़ दिया जाए।
Our scholars said, 'This āyah provides the legal basis for our ruling that it is not permitted to forbid a woman from making ḥajj if she has not performed it, whether or not she has a maḥram, nor should she be prevented from praying in mosques as long as it is it is not feared that that will be a cause of immoral behaviour. The Prophet ﷺ said, "Do not bar the female slaves of Allah from the mosques of Allah."'	हमारे उलमा ने कहा है: "यह आयत हमारे इस हुक्म की क़ानूनी बुनियाद फ़राहम करती है कि किसी औरत को हज अदा करने से मना करना जाइज़ नहीं, अगर उसने अभी तक हज अदा न किया हो, ख़्वाह उसके साथ महरम हो या न हो; और न ही उसे मस्जिदों में नमाज़ पढ़ने से रोका जाए, जब तक इस बात का अंदेशा न हो कि इससे बेहयाई का सबब बनेगा।" नबी ﷺ ने फ़रमाया: "अल्लाह की बंदियों को अल्लाह की मस्जिदों से न रोको।"
The āyah is also why it is said that it is not permitted to demolish a mosque, sell it, or to let it become unused, even if the town in which it is located falls into ruins. One should not forbid the construction of a mosque unless the aim of building it is to cause dissension, as would be the case when people build a	इसी आयत की बिना पर यह भी कहा गया है कि किसी मस्जिद को गिराना, बेचना या उसे मत्रूक छोड़ देना जाइज़ नहीं, अगरचे वह शहर ही क्यों न वीरान हो जाए जिसमें वह वाक़े हो। मस्जिद की तामीर से भी उस वक़्त मना नहीं किया जाएगा, इल्ला यह कि उसकी तामीर का मक़सद फ़ित्ना व इख़्तिलाफ़ पैदा करना हो, जैसे यह कि कोई शख़्स किसी

mosque beside another mosque or close to it, and their intention is to cause dissension among the people of the first mosque and ruin it. In such a case, the second mosque should be destroyed and its construction forbidden.	मस्जिद के बिलकुल पास या उसके क़रीब दूसरी मस्जिद बनाए और उसका मक़सद पहली मस्जिद के नमाज़ियों में इख़्तिलाफ़ डालना और उसे नुक़सान पहुँचाना हो। ऐसी सूरत में दूसरी मस्जिद को गिरा दिया जाएगा और उसकी तामीर से मना किया जाएगा।
It is also why it is not permitted to have two Friday mosques in the same city, or two imāms in the same mosque, or two group prayers said in the same mosque. This will be explained in *Sūrat at-Tawbah*, Allah willing, and elsewhere. The *āyah* also indicates esteem for the prayer and that it is the best of actions and has the greatest reward, and that preventing it is the greatest of wrong actions.	इसी वजह से एक ही शहर में दो जुमा की मस्जिदें होना, या एक ही मस्जिद में दो इमाम होना, या एक ही मस्जिद में दो जमाअतों का क़ायम होना भी जाइज़ नहीं। इसकी तफ़सील, इंशा अल्लाह, सूरह-ए-तौबह में और दूसरे मक़ामात पर आएगी। यह आयत नमाज़ की अज़्मत पर भी दलालत करती है, और इस बात पर कि नमाज़ बेहतरीन आमाल में से है और उसका अज्र सबसे ज़्यादा है, और यह कि नमाज़ से रोकना सबसे बड़ा ज़ुल्म है।
Every place in which Allah is worshipped and prostrated to (*sajada*) is called a mosque (*masjid*). The Messenger of Allah ﷺ said, 'The whole earth was made a mosque and is pure for me (to pray in).' The Companions agreed that when	हर वह जगह जहाँ अल्लाह की इबादत की जाती है और उसके सामने सज्दा किया जाता है, मस्जिद कहलाती है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: "मेरे लिए पूरी ज़मीन को मस्जिद और पाक बना दिया गया है।" सहाबा ؓ का इस पर इत्तिफ़ाक़

an area is singled out for the prayer by a declaration, it is no longer private property and becomes public for all Muslims. If a man builds a mosque in his house and screens it off from people and singles it out for himself, it remains his property and does not become a mosque in the true sense of the word. If he opens it to everyone, its ruling is that of general mosques and it is no longer private property.	था कि जब किसी जगह को एलान के ज़रिये नमाज़ के लिए मुख़सूस कर दिया जाए तो वह ज़ाती मिल्कियत नहीं रहती बल्कि तमाम मुसलमानों के लिए आम हो जाती है। अगर कोई शख़्स अपने घर में मस्जिद बनाए, उसे लोगों से अलग रखे और सिर्फ़ अपने लिए मुख़सूस करे, तो वह उसकी मिल्कियत ही रहती है और हक़ीक़ी मआनी में मस्जिद नहीं बनती। लेकिन अगर वह उसे सब के लिए खोल दे, तो उसका हुक्म आम मस्जिदों जैसा हो जाता है और वह ज़ाती मिल्कियत नहीं रहती।
Such people will never be able to enter them – except in fear.	**ऐसे लोग उनमें दाख़िल नहीं हो सकेंगे, मगर ख़ौफ़ के साथ।**
When the Muslims gain control of them and they are under their authority, then it will not be possible for the unbelievers to enter them, and, if they do enter them, it will be in fear that the Muslims will attack them and punish them for entering them. This is an indication that unbelievers should never be allowed to enter mosques as will come in *Sūrat at-Tawbah*, Allah	जब मुसलमान उन पर क़ाबू पा लेंगे और वे उनकी अमलदारी में होंगे, तो काफ़िरों के लिए उनमें दाख़िल होना मुमकिन नहीं होगा, और अगर वे दाख़िल हों भी तो इस ख़ौफ़ के साथ होंगे कि मुसलमान उन पर हमला करेंगे और उनके दाख़िल होने पर उन्हें सज़ा देंगे। इससे यह इशारा मिलता है कि काफ़िरों को कभी भी मस्जिदों में दाख़िल होने की इजाज़त नहीं दी जानी चाहिए, जैसा कि इंशा अल्लाह सूरह-ए-तौबह में आएगा।

willing. If the *āyah* is about the Christians, it is related that it points ahead to the time of ʿUmar's reconstruction of Jerusalem after its conquest by the Muslims and his ruling that any Christian who enters the mosque of Jerusalem should be beaten, even though it had previously been their place of worship. If it is considered to be about Quraysh, it is said that it refers to the announcement made after the proclamation of the Prophet ﷺ: 'After this year, no idolater should perform the *ḥajj* nor do *ṭawāf* of the House naked.' It is said that what is meant is the command to struggle against them and eradicate them so that none of them enters Sacred Mosque except in fear. It is, in fact, a prohibition in the form of a report.	अगर यह आयत ईसाइयों के बारे में हो तो रिवायत किया गया है कि यह मुसलमानों के हाथों बैतुल-मक़दिस की फ़तह के बाद हज़रत उमरؓ के दौर में उसकी तामीर-ए-नौ के ज़माने की तरफ़ इशारा करती है, और उनके उस हुक्म की तरफ़ कि जो भी ईसाई मस्जिद-ए-बैतुल-मक़दिस में दाख़िल हो उसे मारा जाए, हालाँकि इससे पहले वह उनकी इबादतगाह थी। और अगर इसे क़ुरैश के बारे में समझा जाए तो कहा गया है कि इससे मुराद वह एलान है जो नबी ﷺ के एलान के बाद किया गया: "इस साल के बाद कोई मुशरिक न हज करेगा और न नंगे होकर बैतुल्लाह का तवाफ़ करेगा।" यह भी कहा गया है कि इससे मुराद उनके ख़िलाफ़ जिहाद करने और उन्हें जड़ से मिटाने का हुक्म है, ताकि उनमें से कोई भी मस्जिद-ए-हराम में दाख़िल न हो मगर ख़ौफ़ के साथ। हक़ीक़त में यह ख़बर के अंदाज़ में एक ममनूअत है।
They will have disgrace in this world and in the Next World they will have a terrible punishment.	**उनके लिए दुनिया में रुसवाई है और आख़िरत में उनके लिए सख़्त अज़ाब है।**
Qatādah reports that the word	क़तादाؓ रिवायत करते हैं कि यहाँ

'disgrace' refers to killing in the case of the *ḥarbī*, and *jizyah* in the case of the *dhimmī*. As-Suddī said that their disgrace in this world will be the coming of the Mahdī, and the conquest of 'Amuriyya, Rūmiyah, Constantinople and other cities. If it refers to Quraysh, it is said to refer to their disgrace at the Conquest of Makkah and the punishment in the Next World of those of them who died unbelievers.	"रुसवाई" से मुराद हरबी के मामले में क़त्ल किया जाना है, और ज़िम्मी के मामले में जिज़्या (का निफ़ाज़) है। सुद्दी ने कहा कि दुनिया में उनकी रुसवाई महदी के ज़ुहूर, और अमूरिय्या, रूमिय्या, क़ुस्तुनतुनिया और दूसरे शहरों की फ़तह की सूरत में होगी। और अगर इससे मुराद क़ुरैश हों, तो कहा जाता है कि इससे मुराद फ़त्ह-ए-मक्का के वक़्त उनकी रुसवाई है, और आख़िरत में उनमें से उन लोगों का अज़ाब है जो कुफ़्र की हालत में मर गए।
Both East and West belong to Allah, so wherever you turn, the Face of Allah is there. Allah is All-Encompassing, All-Knowing. [2:115]	**मशरिक़ और मग़रिब दोनों अल्लाह ही के हैं, पस तुम जिधर भी रुख़ करो, वहीं अल्लाह की ज़ात है। अल्लाह बड़ी वुसअत वाला, सब कुछ जानने वाला है। [2:115]**
Both East and West belong to Allah,	**मशरिक़ और मग़रिब दोनों अल्लाह ही के हैं,**
East is where the sun rises and West is where it sets, so the *āyah* implies that all things are subject to Allah's sovereignty, along with all the directions and creatures contained within them. He is the One who originated them and brought	मशरिक़ वह जगह है जहाँ सूरज तुलूअ होता है और मग़रिब वह जगह है जहाँ वह ग़ुरूब होता है, पस यह आयत इस बात पर दलालत करती है कि तमाम चीज़ें अल्लाह की हाकिमियत के ताबे हैं, नीज़ तमाम सम्तें और उनके अंदर मौजूद तमाम मख़लूक़ात भी। वही है जिसने उन्हें

them into existence. These two directions — East and West — are singled out for connection to Him as a mark of honour, like 'the House of Allah', and because the reason for the revelation of the *āyah* dictates that, as will be made clear.	पैदा किया और वजूद बख़्शा। इन दो सम्तों — मशरिक़ और मग़रिब — को ख़ास तौर पर उसकी तरफ़ मंसूब किया गया है बतौर-ए-शरफ़, जैसे "अल्लाह का घर", और इसलिए भी कि आयत के नुज़ूल का सबब इसी का तक़ाज़ा करता है, जैसा कि आगे वाज़ेह किया जाएगा।
So wherever you turn, the Face of Allah is there.	**पस तुम जिधर भी रुख़ करो, वहीं अल्लाह की ज़ात है।**
Scholars disagree about the reason for the revelation of this āyah. There are five positions. ʿĀmir ibn Rabīʿah says, 'It was revealed about some people who prayed in a direction other than the *qiblah* on a dark night, as is transmitted by at-Tirmidhī: "We were with the Prophet ﷺ on a journey during a dark night and we did not know where the *qiblah* was. Each of us prayed according to his own devices. In the morning, we mentioned that to the Messenger of Allah ﷺ and this āyah was revealed."' Abū ʿĪsā said that this hadith lacks a proper *isnād* and we only know it from the hadith of Ashʿath	उलमा के दरमियान इस आयत के नुज़ूल के सबब के बारे में इख़्तिलाफ़ है। इस बारे में पाँच अक़वाल हैं। आमिर बिन रबीअह कहते हैं: "यह आयत उन लोगों के बारे में नाज़िल हुई जिन्होंने अंधेरी रात में क़िब्ला के सिवा किसी और सम्त में नमाज़ पढ़ ली, जैसा कि तिर्मिज़ी ने रिवायत किया है: 'हम एक अंधेरी रात में सफ़र के दौरान नबी ﷺ के साथ थे और हमें मालूम न था कि क़िब्ला किस तरफ़ है। हम में से हर एक ने अपने अंदाज़े के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ ली। सुबह के वक़्त हमने यह बात रसूलुल्लाह ﷺ से अर्ज़ की तो यह आयत नाज़िल हुई।'" अबू ईसा ने कहा कि इस हदीस की सनद दुरुस्त नहीं, और हम इसे सिर्फ़ अशअथ अस्सम्मान की रिवायत से जानते हैं।

as-Sammān. Abū ar-Rabīʿ Ashʿath ibn Saʿīd is weak. But most of the people of knowledge accept the implied judgment and say that if someone prays on a cloudy day in a direction other than the *qiblah* and then it later becomes clear to him that he did not pray in the right direction, his prayer is allowed. That was stated by Sufyān, Ibn al-Mubārak, Aḥmad and Isḥāq. It is also the position of Abū Ḥanīfah and Mālik, although Mālik says: 'It is preferred for him to repeat (the prayer) within the time but that is not an obligation on him because he has performed his obligation as he was commanded to do. Perfection is to seek to correct it within the time and there is evidence in the *sunnah* in the case of someone who prayed alone and then caught that prayer in its time in the group. He repeated it with them. It is only recommended for someone to repeat it if he had his back to the *qiblah* or faced	अबू अर-रबीअ अशअथ बिन सईद ज़ईफ़ हैं। ताहम अकसर अहल-ए-इल्म इससे निकलने वाले हुक्म को क़बूल करते हैं और कहते हैं कि अगर कोई शख़्स अब्र-आलूद दिन में क़िब्ला के सिवा किसी और सम्त में नमाज़ पढ़ ले, और बाद में उस पर वाज़ेह हो जाए कि उसने दुरुस्त सम्त में नमाज़ नहीं पढ़ी थी, तो उसकी नमाज़ दुरुस्त है। यह क़ौल सुफ़यान, इब्नुल-मुबारक, अहमद और इस्हाक़ से मनक़ूल है। यही इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मालिक का भी मौक़िफ़ है, अलबत्ता इमाम मालिक कहते हैं: "बेहतर यह है कि वह वक़्त के अंदर नमाज़ को दोहरा ले, मगर यह उस पर वाजिब नहीं, क्योंकि उसने वह फ़र्ज़ अदा कर दिया है जिसका उसे हुक्म दिया गया था। कमाल यह है कि वक़्त के अंदर इसकी इस्लाह की कोशिश की जाए, और सुन्नत में इसकी दलील मौजूद है कि एक शख़्स ने अकेले नमाज़ पढ़ी, फिर वक़्त के अंदर जमाअत पा ली तो उसने उनके साथ नमाज़ दोहरा ली। नमाज़ दोहराना सिर्फ़ उसी सूरत में मुस्तहब है जब उसने क़िब्ला की तरफ़ पीठ कर ली हो या क़िब्ला से बहुत ज़्यादा हट कर रुख़ किया हो।

a direction very much away from the *qiblah*. If, by his *ijtihād*, he was only a little to the right or left, he does not need to repeat it either in the time or after the time.'	अगर अपने इज्तिहाद के मुताबिक़ वह सिर्फ़ दाएँ या बाएँ थोड़ा सा हटा हो तो न वक़्त के अंदर और न वक़्त के बाद नमाज़ दोहराने की ज़रूरत है।"
Al-Mughīrah and ash-Shāfiʿī said that such a prayer is invalid because facing the *qiblah* is one of the preconditions of the prayer. What Mālik said is sounder because the direction of *qiblah* can be abandoned out of necessity in hand-to-hand combat and is also permitted as a dispensation while travelling. Ibn ʿUmar said, 'It was revealed about travellers who turn wherever their mounts turn.' Muslim transmitted it. He said, 'The Messenger of Allah ﷺ used to pray on his camel going from Makkah to Madinah whatever the direction the camel was facing. About that was revealed: "…so wherever you turn, the Face of Allah is there."' There is no disagreement between scholars that it is permitted to pray	अल-मुग़ीरा और इमाम शाफ़िईؒ ने कहा है कि ऐसी नमाज़ दुरुस्त नहीं, क्योंकि क़िब्ला की तरफ़ रुख़ करना नमाज़ की शराइत में से एक शर्त है। इमाम मालिकؒ का क़ौल ज़्यादा मज़बूत है, क्योंकि ज़रूरत के तहत, जैसे हाथापाई की जंग में, क़िब्ला की सम्त को छोड़ना जाइज़ है, और सफ़र के दौरान भी बतौर-ए-रुख़्सत इसकी इजाज़त है। इब्न उमरؓ ने फ़रमाया: "यह आयत उन मुसाफ़िरों के बारे में नाज़िल हुई है जो जिधर उनकी सवारी का रुख़ हो उधर ही रुख़ कर लेते हैं।" इसे इमाम मुस्लिमؒ ने रिवायत किया है। उन्होंने कहा: "रसूलुल्लाह ﷺ मक्का से मदीना जाते हुए अपनी ऊँटनी पर नमाज़ पढ़ा करते थे, जिस सम्त भी ऊँटनी का रुख़ होता था। इसी बारे में यह आयत नाज़िल हुई: '...पस तुम जिधर भी रुख़ करो, वहीं अल्लाह की ज़ात है।'" इस हदीस की बुनियाद पर उलमा के दरमियान इस बात में कोई

nāfilah prayers while mounted, going by this hadith. No one, however, is permitted to deliberately abandon *qiblah* in a *farḍ* prayer for any other direction, unless that is due to intense fear.	इख़्तिलाफ़ नहीं कि सवारी पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ना जाइज़ है। अलबत्ता किसी को भी फ़र्ज़ नमाज़ में जानबूझ कर क़िब्ला को छोड़ कर किसी और सम्त रुख़ करने की इजाज़त नहीं, सिवाय इसके कि शदीद ख़ौफ़ की हालत हो।
Mālik has differing opinions about someone who is ill and prays on his litter. In one opinion he says that he may not pray a *farḍ* prayer on the back of a camel, even if he is very ill. Saḥnūn said, 'If he does that, he should repeat the prayer.' He said on another occasion, 'If he is one of those who can only pray on the ground using gestures, then he can pray on the camel after it has been halted and made to face *qiblah*.' They agree that it is not valid for anyone who is healthy to pray a *farḍ* prayer except on the ground, unless he is in a state of fear.	इमाम मालिक꣼ के नज़दीक उस शख़्स के बारे में मुख़्तलिफ़ आराएँ हैं जो बीमार हो और अपनी सवारी (महमल) पर नमाज़ पढ़ता हो। एक क़ौल में वे फ़रमाते हैं कि वह ऊँट की पीठ पर फ़र्ज़ नमाज़ नहीं पढ़ सकता, अगरचे वह बहुत ज़्यादा बीमार ही क्यों न हो। सहनून꣼ ने कहा: "अगर वह ऐसा करे तो उसे नमाज़ दोबारा पढ़नी चाहिए।" एक और मौक़े पर उन्होंने फ़रमाया: "अगर वह उन लोगों में से हो जो ज़मीन पर सिर्फ़ इशारों के साथ ही नमाज़ पढ़ सकते हैं, तो वह ऊँट को रोक कर और उसे क़िब्ला-रुख़ कर के उस पर नमाज़ पढ़ सकता है।" इस बात पर सब का इत्तिफ़ाक़ है कि जो शख़्स तंदरुस्त हो, उसके लिए ज़मीन के सिवा कहीं और फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं, अल्ला यह कि वह हालत-ए-ख़ौफ़ में हो।
Fuqahā' disagree about a	फ़ुक़हा इस मसले में इख़्तिलाफ़

traveller on a journey in which the prayer cannot be shortened. Mālik and his people and ath-Thawrī said, 'There can be no voluntary prayers on a camel except during a journey on which the prayer may be shortened, because all the journeys which are reported from the Messenger of Allah ﷺ in which he performed *nāfilah* prayers were those during which the prayer may be shortened.' Ash-Shāfiʿī, Abū Ḥanīfah, al-Ḥasan ibn Ḥayy, al-Layth ibn Saʿd and Dāwūd ibn ʿAlī said that it is permitted to perform *nāfilah* prayers while mounted outside a city on a journey of any length, whether or not the prayer may be shortened, because the reports do not specify one journey rather than another, so it is permitted in every journey.	रखते हैं कि ऐसे सफ़र में, जिसमें नमाज़ क़सर नहीं की जा सकती, मुसाफ़िर का क्या हुक्म है। इमाम मालिकؒ, उनके अस्हाब और इमाम सौरीؒ ने कहा: "ऊँट पर नफ़्ल नमाज़ें पढ़ना जाइज़ नहीं, सिवाय उस सफ़र के जिसमें नमाज़ क़सर की जा सकती हो, क्योंकि रसूलुल्लाह ﷺ से जिन सफ़रों में नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मनक़ूल है, वे सब वही सफ़र थे जिनमें नमाज़ क़सर की जा सकती थी।" इमाम शाफ़िईؒ, इमाम अबू हनीफ़ाؒ, हसन बिन हैयؒ, लैथ बिन सअ्दؒ और दाऊद बिन अलीؒ ने कहा है कि शहर से बाहर किसी भी लंबाई के सफ़र में सवारी पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ना जाइज़ है, ख़्वाह उस सफ़र में नमाज़ क़सर की जा सकती हो या न हो, क्योंकि रिवायतों में किसी एक ख़ास सफ़र की तख़्सीस नहीं की गई, इसलिए हर सफ़र में इसकी इजाज़त है।
Abū Yūsuf said that it is even permitted to pray mounted in a city using gestures going by a report in which Anas ibn Mālik prayed on a donkey in an alley in Madīnah using gestures. Aṭ-	अबू यूसुफ़ؒ ने कहा कि शहर के अंदर भी इशारों के साथ सवारी पर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है, उस रिवायत की बुनियाद पर कि अनस बिन मालिकؓ ने मदीना की एक गली में

Ṭabarī said, 'It is permitted for every rider or walker, resident or travelling, to perform *nāfilah* prayers while mounted or on his feet using gestures.' Al-Athram said, 'Aḥmad ibn Ḥanbal was asked about praying on a mount while resident. He answered, "I have heard about doing that while on a journey. I have not heard about it while resident."' Ibn al-Qāsim said, 'Someone who performs *nāfilah* on a camel-litter performs them while seated. His standing is cross-legged. He bows, placing his hands on his knees and then lifts his head.'	गधे पर इशारों के साथ नमाज़ पढ़ी। इमाम तबरीؒ ने कहा: "हर सवार या पैदल शख़्स के लिए, ख़्वाह मुक़ीम हो या मुसाफ़िर, सवारी पर या खड़े होकर इशारों के साथ नफ़्ल नमाज़ पढ़ना जाइज़ है।" अल-अथरमؒ ने कहा: "इमाम अहमद बिन हंबलؒ से मुक़ीम हालत में सवारी पर नमाज़ पढ़ने के बारे में पूछा गया तो उन्होंने जवाब दिया: 'मैंने सफ़र की हालत में ऐसा करने के बारे में सुना है, लेकिन इक़ामत की हालत में इसके बारे में नहीं सुना।'" इब्न अल-क़ासिमؒ ने कहा: "जो शख़्स ऊँट के मह्मल पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ता है, वह बैठकर नमाज़ अदा करता है। उसका क़ियाम चार ज़ानू बैठना होता है। वह रुकूअ करता है, अपने हाथ घुटनों पर रखता है, फिर सिर उठा लेता है।"
Qatādah said, 'It was revealed about the Negus. When he died, the Prophet ﷺ called the Muslims to pray over him outside Madīnah. They said, "How can we pray over a man who has died? He prayed to other than our *qiblah*." The Negus was the King of	क़तादाؒ ने कहा: "यह आयत नजाशी के बारे में नाज़िल हुई। जब वह वफ़ात पा गए तो नबी ﷺ ने मुसलमानों को मदीना से बाहर उनकी नमाज़-ए-जनाज़ा पढ़ने के लिए बुलाया। लोगों ने कहा: 'हम ऐसे शख़्स की नमाज़-ए-जनाज़ा कैसे पढ़ सकते हैं जो वफ़ात पा चुका है? वह तो हमारे क़िब्ला के अलावा किसी

Abyssinia. His name was Aṣḥamah which means “gift”. He was praying towards Jerusalem when he died after the *qiblah* has been changed to the Kaʿbah. So the *āyah* was revealed. Also revealed about him was: “Among the People of the Book there are some who believe in Allah.” (3:199) So this was an excuse for the Negus.’	और सम्त की तरफ़ नमाज़ पढ़ता था।’ नजाशी हबशा का बादशाह था। उसका नाम असहमा था, जिसके मानी ‘तोहफ़ा’ हैं। जब वह वफ़ात हुआ तो वह बैतुल-मक़्दिस की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ता था, हालाँकि उस वक़्त क़िब्ला काबा की तरफ़ बदल चुका था। पस यह आयत नाज़िल हुई। उसी के बारे में यह आयत भी नाज़िल हुई: ‘अह्ल-ए-किताब में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अल्लाह पर ईमान रखते हैं।’ (3:199) पस यह नजाशी के लिए एक उज़्र था।”
The prayer that the Prophet ﷺ prayed with his Companions was in 9 AH. This is used as evidence by those who permit praying over someone who is absent. That was the position of ash-Shāfiʿī. One of the stranger points about the prayer over the dead person is what ash-Shāfiʿī said: ‘One prays over someone who is absent. I was in Baghdad in the gathering of Fakhr ’d-dīn [ar-Rāzī]. A man from Khorasan entered and he asked, “How is so-and-so?” He told him, “He has died.” He	नबी ﷺ ने जो नमाज़ अपने सहाबाؓ के साथ अदा की वह 9 हिजरी में थी। इससे उन लोगों ने दलील ली है जो ग़ायब शख़्स की नमाज़-ए-जनाज़ा पढ़ने को जाइज़ कहते हैं, और यही इमाम शाफ़िईؒ का मौक़िफ़ था। मय्यत पर नमाज़ के बारे में एक निस्बतन अजीब नुक़्ता वह है जो इमाम शाफ़िईؒ ने बयान किया: “ग़ायब शख़्स की नमाज़-ए-जनाज़ा पढ़ी जाती है। मैं बग़दाद में फ़ख़्रुद्दीन [राज़ी] की मजलिस में मौजूद था। ख़ुरासान से एक शख़्स आया और उसने पूछा: ‘फलाँ शख़्स कैसा है**?**’ उसे बताया गया: ‘वह वफ़ात पा चुका

exclaimed, "We belong to Him and to Him we return!" Then he told us, "Get up and pray for him." He got up and led us in the prayer for him. That was six months after his death, the distance it took to travel between the two lands.'	है।' उसने कहा: 'हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ लौट कर जाने वाले हैं!' फिर उसने हमसे कहा: 'उठो और उसके लिए नमाज़ पढ़ो।' वह ख़ुद उठा और उसने हमें उसकी नमाज़ पढ़ाई। यह उसकी वफ़ात के छः महीने बाद था, जो दोनों इलाक़ों के दरमियान सफ़र की मुद्दत के बराबर था।"
We believe that the basis for that is the prayer of the Prophet ﷺ over the Negus. Our scholars, however, say that that was especially for the Prophet ﷺ for three reasons. The first is that the earth was flattened for him, north and south, so that he could see the bier of the Negus as he was able to see the al-Aqṣā Mosque. Those who disagree say that there was no point in seeing him; the benefit is in conveying his blessing. The second is that the Negus had no relative among the Muslims to perform the prayer for him. Those who disagree about this say that it is impossible for a king following a religion not to have followers.	हम इस बात पर यक़ीन रखते हैं कि इसकी बुनियाद नबी ﷺ का नजाशी पर नमाज़ पढ़ना है। हालांकि हमारे उलमा कहते हैं कि यह ख़ुसूसियत के साथ नबी ﷺ के लिए थी, और इसकी तीन वजहें हैं। पहली यह कि ज़मीन आप ﷺ के लिए उत्तर से दक्षिण तक हमवार कर दी गई थी, यहाँ तक कि आप नजाशी का जनाज़ा उसी तरह देख सकते थे जैसे आप मस्जिद-ए-अक़्सा को देख सकते थे। जो लोग इससे इख़्तिलाफ़ करते हैं वे कहते हैं कि देखने में कोई ख़ास फ़ायदा नहीं था, असल फ़ायदा तो आपकी बरकत के पहुँचने में है। दूसरी वजह यह है कि नजाशी का मुसलमानों में कोई ऐसा रिश्तेदार नहीं था जो उसकी नमाज़ अदा करता। इस पर इख़्तिलाफ़ करने वाले कहते हैं कि किसी बादशाह के लिए, जो किसी

The third reason is that the Prophet ﷺ wanted to pray over the Negus to bring him mercy and seek the friendship of the kings after him since they saw his concern for him when he was alive and after his death. Those who disagree say that the blessing of the supplication of the Prophet ﷺ and others is agreed to reach the deceased. Ibn al-ʿArabī said, 'What I think about the Prophet's prayer over the Negus is because he knew that the Negus and those who believed along with him did not have any report about how the funeral prayer was performed and knew that they would bury him without it. That is why he hastened to perform the prayer for him.'	दीन की पैरवी करता हो, यह नामुमकिन है कि उसके पैरोकार न हों। तीसरी वजह यह है कि नबी ﷺ ने नजाशी पर नमाज़ इसलिए पढ़ी कि उसके लिए रहमत की दुआ करें और उसके बाद आने वाले बादशाहों की दोस्ती हासिल करें, क्योंकि उन्होंने नजाशी के बारे में आपकी ज़िंदगी में भी और वफ़ात के बाद भी आपकी दिल-सोज़ी देखी। जो लोग इससे इख़्तिलाफ़ करते हैं वे कहते हैं कि नबी ﷺ और दूसरों की दुआ की बरकत के मय्यत तक पहुँचने पर सब का इत्तिफ़ाक़ है। इब्न अल-अरबी ؒ ने कहा: "नबी ﷺ के नजाशी पर नमाज़ पढ़ने के बारे में मेरी राय यह है कि आपको मालूम था कि नजाशी और उसके साथ ईमान लाने वालों के पास जनाज़ा की नमाज़ के तरीक़े के बारे में कोई रिवायत नहीं थी, और आपको इल्म था कि वे उसे बिना नमाज़ के दफ़न कर देंगे, इसी लिए आपने जल्दी करके उसकी नमाज़ अदा की।"
The first interpretation is better because if he actually could see him, then he was not praying over someone absent. He was praying over someone present	पहली तफ़सीर ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि अगर आप ﷺ वाक़ई उसे देख सकते थे तो आप किसी ग़ायब शख़्स पर नमाज़ नहीं पढ़ रहे थे, बल्कि एक ऐसे शख़्स पर नमाज़ पढ़ रहे थे जो

that he could see. Someone absent is not seen. Allah knows best.	आपके सामने मौजूद था और जिसे आप देख सकते थे। ग़ायब शख़्स को देखा नहीं जाता। अल्लाह ही बेहतर जानता है।
Ibn Zayd said, ‘The Jews recommended to the Prophet ﷺ that he should pray facing Jerusalem. When he did, they said, “He was only guided by us.” Then, when the *qiblah* was changed to the Kaʿbah, the Jews said, “*What has turned them from their qiblah they used to face?*”, and this *āyah* was revealed.’ According to this position, there is a sequence in the events leading up to it. When the Jews objected to the *qiblah* changing, Allah Almighty made it clear that He makes His slaves worship however He wishes. If He wishes, He commands them to face Jerusalem, and if He wishes, He commands them to face the Kaʿbah. He is not questioned about what He does, but they will be questioned.	इब्न ज़ैदؒ ने कहा: “यहूदियों ने नबी ﷺ को मशवरा दिया कि आप बैतुल-मक़्दिस की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ें। जब आपने ऐसा किया तो उन्होंने कहा: ‘आप को तो सिर्फ़ हमारी ही रहनुमाई हासिल है।’ फिर जब क़िब्ला काबा की तरफ़ बदल दिया गया तो यहूदियों ने कहा: ‘किस चीज़ ने उन्हें उस क़िब्ले से फेर दिया जिसकी तरफ़ वे पहले रुख़ करते थे?’ तब यह आयत नाज़िल हुई।” इस मौक़िफ़ के मुताबिक़, इस तक पहुँचने वाले वाक़िआत में एक तरतीब पाई जाती है। जब यहूदियों ने क़िब्ले की तब्दीली पर एतराज़ किया तो अल्लाह तआला ने वाज़ेह कर दिया कि वह अपने बंदों से जिस तरह चाहता है इबादत कराता है। अगर वह चाहे तो उन्हें बैतुल-मक़्दिस की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म देता है, और अगर चाहे तो उन्हें काबा की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म देता है। उसके कामों के बारे में उससे सवाल नहीं किया जाता, बल्कि उनसे सवाल किया जाएगा।

Another view is that this *āyah* is abrogated by Allah's words: '*Wherever you come from, turn your face to the Masjid al-Ḥarām.*' (2:149) Ibn ʿAbbās said that it seems that in the beginning a man prayed in whatever direction he wished to and then that was abrogated. Qatādah says that the *āyah* which abrogated it was: '*Turn your face, therefore, towards the Masjid al-Ḥarām.*' (2:144) Abū ʿĪsā at-Tirmidhī related it.	एक दूसरा क़ौल यह है कि यह आयत अल्लाह तआला के इस फ़रमान से मंसूख़ हो चुकी है: "तुम जहाँ से भी आओ, अपना रुख़ मस्जिद-ए-हराम की तरफ़ कर लो।" (2:149) इब्न अब्बासؓ ने कहा कि ब-ज़ाहिर इब्तिदा में आदमी जिस सम्त चाहता था नमाज़ पढ़ लेता था, फिर इस हुक्म को मंसूख़ कर दिया गया। क़तादाؒ कहते हैं कि जिस आयत ने इसे मंसूख़ किया वह यह है: "पस अपना रुख़ मस्जिद-ए-हराम की तरफ़ कर लो।" (2:144) इसे अबू ईसा तिर्मिज़ीؒ ने रिवायत किया है।
Yet another view related from Mujāhid and ad-Ḍaḥḥāk is that it remains a firm ruling. It means: wherever you are in the east or the west, there is the face of Allah which you are commanded to face and that is the direction of the Kaʿbah. Mujāhid and Ibn Jubayr said that when 'Call on Me and I will answer you' (40:60) was revealed, people asked, 'Where?' and 'so wherever you turn, the Face of Allah is there' was revealed. Ibn ʿUmar and an-Nakhaʿī said, 'Wherever	मुजाहिदؒ और ज़हहाकؒ से मन्क़ूल एक और क़ौल यह है कि यह हुक्म बदस्तूर बरक़रार है। इसका मफ़हूम यह है कि तुम मशरिक़ में हो या मग़रिब में, जहाँ भी हो अल्लाह का चेहरा वहीं है जिसकी तरफ़ रुख़ करने का तुम्हें हुक्म दिया गया है, और वह सम्त काबा ही की है। मुजाहिदؒ और इब्न जुबैरؒ ने कहा कि जब यह आयत नाज़िल हुई: "मुझ से दुआ करो, मैं तुम्हारी दुआ क़बूल करूँगा" (40:60) तो लोगों ने पूछा: "कहाँ?" इस पर यह आयत नाज़िल हुई: "पस तुम जिधर भी रुख़ करो, अल्लाह का चेहरा वहीं है।" इब्न

you turn on your journeys and when moving about, the face of Allah is there.' It is further said that it is connected to Allah's words in the previous āyah (2:114) 'Who could do greater wrong?' and means: 'O believers, the lands of Allah are vast enough for you, so those who ruin the mosques of Allah cannot prevent you from turning your faces towards Allah's qiblah no matter where you are on the earth.' It is said that when the Prophet ﷺ was barred from the House in the Year of al-Ḥudaybiyah, the Muslims were saddened by that.	उमरؓ और नख़ईؒ ने कहा: "सफ़र के दौरान और चलते-फिरते, तुम जिधर भी रुख़ करो, अल्लाह का चेहरा वहीं है।" यह भी कहा गया है कि इसका ताल्लुक़ पिछली आयत (2:114) **"इस से बढ़ कर ज़ालिम कौन हो सकता है?"** से है, और इसका मतलब यह है: "ऐ ईमान वालों! अल्लाह की ज़मीन तुम्हारे लिए बहुत वसीअ है, लिहाज़ा जो लोग अल्लाह की मस्जिदों को वीरान करते हैं वे तुम्हें इस बात से नहीं रोक सकते कि तुम ज़मीन के किसी भी हिस्से में हो, अल्लाह के क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करो।" यह भी कहा गया है कि जब सुल्ह-ए-हुदैबिया के साल नबी ﷺ को बैतुल्लाह में दाख़िल होने से रोक दिया गया तो मुसलमानों को इस पर सख़्त रंज हुआ।
Those who say that it is abrogated say that there is no objection to that inasmuch as it is a report because it can convey the meaning of a command. It is possible that 'wherever you turn, the Face of Allah is there' can mean 'towards the Face of Allah'.	जो लोग कहते हैं कि यह आयत मंसूख़ है, वे कहते हैं कि इसमें कोई इश्क़ाल नहीं, क्योंकि यह ख़बर के अंदाज़ में है और ख़बर कभी हुक्म का मफ़हूम भी अदा कर देती है। यह भी मुमकिन है कि "पस तुम जिधर भी रुख़ करो, अल्लाह का चेहरा वहीं है" का मतलब हो: "अल्लाह के चेहरे की तरफ़।"
People disagree about the	क़ुरआन और सुन्नत में अल्लाह

interpretation of the word *'wajh'* (Face) as ascribed to Allah Almighty in the Qur'an and the *Sunnah*. Astute scholars say that it refers to created existence and is used for it as a metaphor, since the face is the most apparent part of the body and the most sublime. Ibn Fūrak said, 'The attribute of the thing is mentioned and it is meant to designate the One described by it. The expression "having a face" means that something has existence.' Ibn ʿAbbās said, 'The Face designates Allah Himself as He says: "*but the Face of your Lord will remain, Master of Majesty and Generosity*" (55:27).' Some imams say that this designation should be affirmed when it is heard, even if it contradicts what intellects demand of attributes that are appropriate for the Eternal. Ibn ʿAṭiyyah says that this is weak and what is actually meant is Allah's existence. It is also said that it means the direction which one	तआला की तरफ़ मंसूब लफ़्ज़ 'वज्ह' (चेहरा) की तफ़्सीर के बारे में लोगों के दरमियान इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। बारीक-नज़र रखने वाले उलमा कहते हैं कि इससे मुराद वुजूद-ए-मख़लूक़ है और इसे बतौर-ए-इस्तिआरा इस्तेमाल किया गया है, क्योंकि चेहरा जिस्म का सबसे नुमायाँ और सबसे मुअज़्ज़ज़ हिस्सा होता है। इब्न फ़ौरक़ ने कहा: "किसी चीज़ की सिफ़त का ज़िक्र किया जाता है और उससे मुराद उसी मौसूफ़ की ज़ात होती है। 'चेहरा रखने' का मतलब यह है कि किसी शै का वुजूद है।" इब्न अब्बास ने कहा: "चेहरा अल्लाह ही की ज़ात को ज़ाहिर करता है, जैसा कि अल्लाह तआला का फ़रमान है: 'और तुम्हारे रब का चेहरा बाक़ी रहेगा, जो जलाल और बुज़ुर्गी वाला है' (55:27)।" बाज़ आइम्मा कहते हैं कि जब यह वस्फ़ सुना जाए तो उसे साबित माना जाए, अगरचे वह उन सिफ़ात के बारे में अक़्ल के तक़ाज़ों के ख़िलाफ़ ही क्यों न हो जो ज़ात-ए-अज़ली के शायान-ए-शान समझी जाती हैं। इब्न अतिय्या कहते हैं कि यह राय कमज़ोर है, और दरअसल इससे मुराद अल्लाह का वुजूद है। यह भी

faces, in other words, the *qiblah*, and it is also said that it means what you aim at.	कहा गया है कि इससे मुराद वह सम्त है जिसकी तरफ़ रुख़ किया जाता है, यानी क़िब्ला, और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद वह मक़्सद है जिसकी तरफ़ आदमी क़स्द करता है।
Another opinion is that the word *'wajh'* (Face), as ascribed to Allah, means: 'Wherever the pleasure of Allah lies and His reward,' going by Allah's words: '*We feed you only out of desire for the Face of Allah.*' (76:9), meaning in order to please Him and seek His reward, and by the words of the Prophet ﷺ: 'If anyone builds a mosque by which he desires the Face of Allah, Allah will build for him its like in the Garden.' He said, 'On the Day of Rising a sealed page will be brought and set before Allah Almighty. The Almighty will say to the angels, "Take this away and bring that one." The angels will say, "By Your might, we only saw good!" He Who knows best will say, "This was for other than My Face. I only	एक और राय यह है कि अल्लाह तआला की तरफ़ मंसूब लफ़्ज़ 'वज्ह' (चेहरा) से मुराद यह है: "जहाँ अल्लाह की रज़ा और उसका अज्र हो"। इसकी दलील अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: "हम तुम्हें सिर्फ़ अल्लाह के चेहरे की ख़्वाहिश में खाना खिलाते हैं" (76:9), यानी अल्लाह को राज़ी करने और उसके अज्र की तलाश में। इसी तरह नबी ﷺ का फ़रमान है: "जो शख़्स ऐसी मस्जिद बनाए जिससे उसका मक़सद अल्लाह के चेहरे की रज़ा हो, अल्लाह उसके लिए जन्नत में उसी जैसी (इमारत) बना देगा।" आप ﷺ ने फ़रमाया: "क़यामत के दिन एक मुहरबंद सहीफ़ा लाया जाएगा और अल्लाह तआला के सामने पेश किया जाएगा। अल्लाह तआला फ़रिश्तों से फ़रमाएगा: 'इसे ले जाओ और वह वाला ले आओ।' फ़रिश्ते कहेंगे: 'तेरी इज़्ज़त की क़सम! हमने तो इसमें सिर्फ़ ख़ैर ही देखी!' सबसे बेहतर

accept actions that were done for My Face,"' i.e. by those that were sincere. Ad-Dāraquṭnī transmitted it. It is said that it means: 'Allah is there' and *'wajh'* is connective. Al-Kalbī and al-Qutabī said that it is like what the Muʿtazilites say.	जानने वाला (अल्लाह) फ़रमाएगा: 'यह मेरे चेहरे के लिए नहीं था। मैं तो सिर्फ़ वही आमाल क़बूल करता हूँ जो मेरे चेहरे के लिए किए गए हों'", यानी ख़ुलूस के साथ किए गए आमाल। इसे दारक़ुतनीؒ ने रिवायत किया है। यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: "अल्लाह वहाँ मौजूद है", और लफ़्ज़ 'वज्ह' महज़ रब्त के लिए आया है। यह क़ौल क़लबीؒ और क़ुतबीؒ का है, और यह मुअतज़िला के क़ौल के मशाबेह है।
Allah is All-Encompassing, All-Knowing.	**अल्लाह बड़ी वुसअत वाला, सब कुछ जानने वाला है।**
He gives His slaves latitude in their *dīn* and does not oblige them to do anything which is beyond their capacity. It is said that 'All-Encompassing' means that His knowledge encompasses everything, as in Allah's words: *'He encompasses everything in knowledge.'* (20:98) Al-Farrā' said that the name All-Encompassing indicates the Generous whose giving encompasses everything as in Allah's words: *'My mercy encompasses everything.'*	वह अपने बंदों को उनके दीन में वुसअत अता करता है और उन्हें किसी ऐसी चीज़ का मुकल्लफ़ नहीं बनाता जो उनकी ताक़त से बाहर हो। कहा गया है कि "वुसअत वाला" होने का मतलब यह है कि उसका इल्म हर चीज़ को मुहीत है, जैसा कि अल्लाह तआला का फ़रमान है: "वह हर चीज़ को अपने इल्म में मुहीत किए हुए है।" (20:98) अल-फ़र्राअ ؒ ने कहा कि "वुसअत वाला" नाम उस सख़ी ज़ात की तरफ़ इशारा करता है जिसकी अता हर चीज़ को घेरे हुए है, जैसा कि अल्लाह तआला का फ़रमान है: "मेरी रहमत हर चीज़ को

(7:156) It is said that His forgiveness is all-encompassing. It is said that He is gracious to His slaves and has no need of their actions.	मुहीत है।" (7:156) यह भी कहा गया है कि उसकी मग़फ़िरत हर चीज़ को शामिल है। और यह भी कहा गया है कि वह अपने बंदों पर निहायत मेहरबान है और उनके आमाल का मुहताज नहीं।
They say, 'Allah has a son.' Glory be to Him! No, everything in the heavens and earth belongs to Him. Everything is obedient to Him. [2:116]	**वे कहते हैं: "अल्लाह की कोई औलाद है।" वह पाक है! नहीं, बल्कि आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब उसी का है। हर चीज़ उसी की फ़रमाबरदार है। [2:116]**
They say, 'Allah has a son.' Glory be to Him!	**वे कहते हैं: "अल्लाह की एक औलाद है।" वह पाक है!**
This refers to what the Christians say about the Messiah being the son of God. It is also said that it refers to the Jews' statement about 'Uzayr being the son of God. It is said that it is about the unbelieving Arabs who say that the angels are the daughters of Allah. These points will be discussed in Sūrat Maryam and Sūrat al-Anbiyā'.	इससे मुराद वह बात है जो ईसाई मसीह◌ं को अल्लाह का बेटा क़रार देने के बारे में कहते हैं। यह भी कहा गया है कि इससे यहूदियों का यह क़ौल मुराद है कि उज़ैर◌ं अल्लाह के बेटे हैं। और यह भी कहा गया है कि इसका ताल्लुक़ उन मुश्रिक अरबों से है जो फ़रिश्तों को अल्लाह की बेटियाँ कहते थे। इन तमाम उमूर पर सूरह मरयम और सूरह अल-अंबिया में तफ़सील से गुफ़्तगू आएगी।
Al-Bukhārī transmitted from Ibn 'Abbās that the Prophet ﷺ said, 'Allah Almighty says, "The son of Ādam has denied	इमाम बुख़ारी◌ं ने इब्न अब्बास◌ं से रिवायत किया है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: अल्लाह तआला फ़रमाता है: "इब्न-ए-आदम ने मेरी तक़ज़ीब

Me and he has no right to do that. He has abused Me and he has no right to do that. He denies Me by claiming that I cannot bring him back as he was. He abuses Me by saying that I have a child. I am too glorious to take a consort or child.”’	की, हालाँकि उसे इसका कोई हक़ न था, और उसने मेरी तौहीन की, हालाँकि उसे इसका भी कोई हक़ न था। उसने मेरी तक़ज़ीब इस तरह की कि यह दावा किया कि मैं उसे दोबारा उसी तरह वापस नहीं ला सकता जैसा वह था, और उसने मेरी तौहीन इस तरह की कि यह कहा कि मेरी कोई औलाद है। मैं इससे बहुत बुलंद और अज़ीम हूँ कि मेरे लिए कोई शरीक-ए-हयात या औलाद हो।”
The word *subḥāna* (Glory be) mean ‘to declare free of’ and ‘to disconnect’. It declares the impossibility of their statement that Allah has a son. Allah is unique in His Essence, One in His attributes. He has not had a child, obviating the need for him to have a consort: *‘How could He have a son when He has no wife?’* (6:101) He was not born, obviating the need for something to have existed before Him. He is greatly exalted above what the wrongdoers and deniers say. A child is always of the same genus as his parent and so how could Allah – glory be to Him!	लफ़्ज़ सुब्हान **(**पाक है) का मतलब है “हर ऐब से पाक क़रार देना” और “मुनक़ते करना”। यह इस बात के नामुमकिन होने का ऐलान है कि अल्लाह की कोई औलाद हो। अल्लाह अपनी ज़ात में यकता है और अपनी सिफ़ात में वाहिद है। उसकी कोई औलाद नहीं, इसलिए उसे किसी ज़ौजा की हाजत भी नहीं: **“**उसका बेटा कैसे हो सकता है जब उसकी कोई बीवी ही नहीं**?”** (6:101) वह पैदा नहीं हुआ, इसलिए उससे पहले किसी के वुजूद का तसव्वुर भी नहीं। वह उन तमाम बातों से बहुत बुलंद है जो ज़ालिम और मुनकिर लोग कहते हैं। औलाद हमेशा अपने वालिदैन ही की जिन्स से होती है, तो अल्लाह — वह पाक है! — अपनी

– have a son among His creatures when nothing is like Him? The nature of a child is to be of the same species and in-time while timelessness necessitates oneness and permanence. He is Timeless, Pre-eternal, One, Unique. Alone, the Everlasting Sustainer of all. No one is comparable to Him.	मख़लूक़ में से किसी को बेटा कैसे बना सकता है जबकि उसके जैसा कोई चीज़ ही नहीं**?** औलाद की फ़ितरत यह है कि वह हम-जिन्स और ज़मानी होती है, जबकि अज़लियत व ला-यज़ालियत वहदानियत और दवाम को लाज़िम करती है। वह अज़ली है, क़दीम है, एक है, यकता है। वही तनहा हमेशा बाक़ी रहने वाला, सब का सहारा देने वाला है। कोई भी उसका हमसर नहीं।
Everything in the heavens and earth belongs to Him	**आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब उसी का है।**
There is nothing which He did not originate and bring into existence.	कोई भी चीज़ ऐसी नहीं जिसे उसने पैदा न किया हो और वुजूद में न लाया हो।
Everything is obedient to Him.	**हर चीज़ उसी की फ़रमाबरदार है।**
Qānit (obedient) means submissive and compliant. All creatures are subjected to Allah. The obedience of inanimate things is in the manifestation of the work done on them and by them. *Qunūt* means obedience as well as meaning silence. Zayd ibn Arqam said, 'We used to speak	क़ानित (फ़रमाबरदार) के मानी ताबे', मुती' और झुकने वाले के हैं। तमाम मख़लूक़ात अल्लाह के ताबे' हैं। बे-जान चीज़ों की इताअत उस काम के ज़ुहूर में होती है जो उन पर और उनके ज़रिए अंजाम पाता है। क़ुनूत के मानी इताअत के भी हैं और ख़ामोशी के भी। ज़ैद बिन अर्क़मؓ ने कहा: "हम नमाज़ में बात किया करते थे, एक आदमी अपने पास वाले से

in the prayer, a man speaking to the man at his side, until it reached: "Stand in obedience to Allah." (2:238) We were commanded to be silent and forbidden to talk.' *Qunūt* is the prayer. As-Suddī and others said that it means that everyone will stand in obedience to Him on the Day of Rising. Al-Ḥasan said that it means that everyone undertakes to testify that they are His slave. *Qunūt* linguistically means standing, as az-Zajjāj said. The *āyah* means: creatures are obedient, undertake slavehood, either by conscious admission or, if they do not consciously obey, the effect of Allah's action becomes clear on them. It is also said that the root meaning is 'obedience'.	बात करता था, यहाँ तक कि यह आयत नाज़िल हुई: 'अल्लाह के सामने इताअत के साथ खड़े हो जाओ' (2:238), तो हमें ख़ामोश रहने का हुक्म दिया गया और बात करने से मना कर दिया गया।" क़ुनूत से मुराद नमाज़ भी है। सुद्दी◌ और दूसरों ने कहा कि इसका मतलब यह है कि क़ियामत के दिन सब लोग उसके सामने इताअत के साथ खड़े होंगे। हसन◌ ने कहा कि इसका मतलब यह है कि हर शख़्स इस बात का इक़रार करेगा कि वह उसका बंदा है। ज़्जाज◌ के मुताबिक़ लुग़वी ए'तिबार से क़ुनूत के मानी खड़े होने के हैं। आयत का मफ़हूम यह है कि तमाम मख़लूक़ात फ़रमाबरदार हैं और बंदगी इख़्तियार करती हैं—या तो शऊरी तौर पर इक़रार के साथ, और अगर शऊरी इताअत न भी हो तो अल्लाह के फ़े'ल के आसार उन पर ज़ाहिर हो जाते हैं। यह भी कहा गया है कि इस माद्दे का असल मानी "इताअत" है।
The Originator of the heavens and earth. When He decides on something, He just says to it, 'Be!' and it is. [2:117]	**वह आसमानों और ज़मीन का मोजिद है। जब वह किसी चीज़ का फ़ैसला करता है तो बस उसे कहता है: "हो जा" और वह हो जाती है। [2:117]**

The Originator of the heavens and earth.	**आसमानों और ज़मीन का मोजिद।**
The form used for the name 'the Originator' is one that gives extra emphasis to the meaning. To originate something is to bring it into existence without any prior model. This means that Allah brought the heavens and the earth into existence and fashioned them without any previous model. Anyone who makes something not previously thought of is called an originator. The verb is the source of the term *bid'ah* which means innovation. It is called that because the one who does it innovates something which was not previously done or enunciated by any qualified imam.	लफ़्ज़ "मोजिद" जिस सिग़े में आया है, वह मानी में मज़ीद ज़ोर और तअकीद पैदा करता है। किसी चीज़ को मोजिद करना यह है कि उसे किसी साबिक़ा नमूने के बग़ैर वुजूद में लाया जाए। इसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला ने आसमानों और ज़मीन को बग़ैर किसी पहले नमूने के पैदा किया और उनकी सूरत-गरी की। जो शख़्स कोई ऐसी चीज़ वुजूद में लाए जिसका पहले तसव्वुर न था, वह मोजिद कहलाता है। इसी माद्दे से लफ़्ज़ बिदअत निकला है, जिसके मानी नई चीज़ इजाद करने के हैं। उसे बिदअत इसलिए कहा जाता है कि करने वाला ऐसी चीज़ इजाद करता है जो उससे पहले किसी मो'तबर इमाम की तरफ़ से न की गई हो और न बयान की गई हो।
No innovation issuing from a creature can have a basis in the Sharī'ah. If it has any basis at all it may fall under the category of recommended actions. If it is praiseworthy, even if it has no precedent, like	मख़लूक़ की तरफ़ से सादिर होने वाली कोई बिदअत शरीअत में अस्ल नहीं रखती। अगर उसकी कोई अस्ल हो भी तो वह मुस्तहब आमाल के दायरे में आ सकती है। अगर कोई काम क़ाबिल-ए-तारीफ़ हो, ख़्वाह उसकी कोई साबिक़ मिसाल न हो—

some type of generosity or other good deed, it may well be a praiseworthy action, even if no one has done it before. This is supported by the words of 'Umar regarding the *tarāwīḥ* prayer, 'This is an excellent innovation', since it was a good and praiseworthy action. The Prophet ﷺ prayed it, and then left it and did not continue doing it and people did not gather for it. 'Umar reinstated it and people gathered for it and he recommended it to them as an innovation, but a praiseworthy one.	जैसे किसी क़िस्म की सख़ावत या कोई और नेक अमल—तो वह क़ाबिल-ए-तारीफ़ हो सकता है, अगरचे उससे पहले किसी ने उसे अंजाम न दिया हो। इसकी ताईद हज़रत उमर॓ के उस क़ौल से होती है जो उन्होंने नमाज़-ए-तरावीह के बारे में फ़रमाया: "यह एक अच्छी बिदअत है", क्योंकि वह नेक और क़ाबिल-ए-तारीफ़ अमल था। नबी ﷺ ने उसे पढ़ा, फिर उसे छोड़ दिया और उस पर दवाम न किया, और लोग भी उस पर जमा नहीं होते थे। हज़रत उमर॓ ने उसे दोबारा क़ायम किया, लोग उस पर जमा हुए, और उन्होंने उसे बिदअत के तौर पर मुतआरिफ़ कराया—लेकिन एक क़ाबिल-ए-तारीफ़ बिदअत के तौर पर।
Anything which is contrary to what Allah and His Messenger commanded is categorically repudiated and blameworthy and this is what is being referred to by the Messenger of Allah ﷺ when he said in his *khuṭbah*, 'The worst of matters are the new ones, and every innovation (*bid'ah*) is	हर वह चीज़ जो अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के हुक्म के ख़िलाफ़ हो, क़तई तौर पर मर्दूद और क़ाबिल-ए-मज़म्मत है। यही वह बिदअत है जिसकी तरफ़ रसूलुल्लाह ﷺ ने अपने ख़ुत्बे में इशारा फ़रमाया: "बदतरीन उमूर नई इजाद की हुई बातें हैं, और हर बिदअत गुमराही है"—यानी वह चीज़ जो किताब, सुन्नत या सहाबा॓ के तरीक़े के मुताबिक़ न हो। इस

misguidance,' meaning anything which is not in keeping with the Book or the *Sunnah* or the practice of the Companions. The matter is made even clearer by the words of the Prophet ﷺ: 'Anyone who innovates a good *sunnah* in Islam has its reward and the reward of whoever does it after him without that decreasing his reward in any way. Anyone who innovates a bad *sunnah* in Islam bears its burden and the burden of whoever acts by it after him without that decreasing his burden in any way.' So innovations can be good or bad, and this is the basic principle regarding this matter. Protection and success are by Allah. There is no Lord but Him.	अम्र को नबी ﷺ के इस फ़रमान से मज़ीद वज़ाहत मिलती है: "जो शख़्स इस्लाम में कोई अच्छी सुन्नत जारी करे, उसके लिए उसका अज्र है और उन सब का अज्र भी जो उसके बाद उस पर अमल करें, बग़ैर इसके कि उनके अज्र में कोई कमी हो। और जो शख़्स इस्लाम में कोई बुरी सुन्नत जारी करे, उस पर उसका बोझ है और उन सब का बोझ भी जो उसके बाद उस पर अमल करें, बग़ैर इसके कि उनके बोझ में कोई कमी हो।" पस बिदअत अच्छी भी हो सकती है और बुरी भी—और यही इस मसले का बुनियादी उसूल है। हिफ़ाज़त और कामयाबी अल्लाह ही की तरफ़ से है। उसके सिवा कोई माबूद नहीं।
When He decides on something, He just says to it, 'Be!' and it is.	**जब वह किसी चीज़ का फ़ैसला करता है तो बस उसे कहता है: "हो जा" और वह हो जाती है।**
This means that, when He desires to complete something and make it perfect in accordance with His perfect knowledge of it, He says to it,	इसका मतलब यह है कि जब वह किसी चीज़ को अपने कामिल इल्म के मुताबिक़ पूरा करना और उसे दर्जा-ए-कमाल तक पहुँचाना चाहता

'Be!' Ibn ʿArafah said, 'Allah's decision on a thing entails perfecting it, carrying it out and finishing it. That is why a judge is called a *qāḍī*, because, when he decides on a judgment, the quarrel is ended.' Al-Azharī said that the verb *qaḍā* (decide) has various meanings. Its root meaning means to finish something and complete it.	है तो उसे कहता है: "हो जा"। इब्न-ए-अरफ़ाؒ ने कहा: "किसी चीज़ के बारे में अल्लाह का फ़ैसला उसकी तकमील, उसके नफ़ाज़ और उसके इख़्तिताम को लाज़िम कर देता है। इसी लिए क़ाज़ी को क़ाज़ी कहा जाता है, क्योंकि जब वह किसी मामले का फ़ैसला करता है तो झगड़ा ख़त्म हो जाता है।" अज़हरीؒ ने कहा कि फ़ेअल क़ज़ा (फ़ैसला करना) के कई मआनी हैं, और उसका असली मतलब किसी चीज़ को पूरा करना और मुकम्मल करना है।
Our scholars say that *qaḍā* is a word with various meanings. It can mean 'to create' as in Allah's words: '…He determined (*qaḍāhunna*) them as seven heavens' (41:12), meaning 'created them'. It can mean 'to inform' as in: 'We decreed (*qaḍaynā*) for the tribe of Israel in the Book' (17:4), and it can mean to command as in: 'Your Lord has decreed (*qaḍā*) that you should worship none but Him.' (17:23) It can mean to force a judgment to be carried out which is why a judge is called a *qāḍī*. It can	हमारे उलेमा कहते हैं कि क़ज़ा (قضی) ऐसा लफ़्ज़ है जिसके कई मआनी हैं। यह "पैदा करना" के मआनी में भी आता है, जैसा कि अल्लाह तआला का फ़रमान है: "फिर उसने उन्हें सात आसमान मुक़र्रर कर दिया" (41:12), यानी उन्हें पैदा किया। यह "ख़बर देना" के मआनी में भी आता है, जैसे: "और हमने बनी इस्राईल के लिए किताब में फ़ैसला लिख दिया" (17:4); और यह "हुक्म देना" के मआनी में भी आता है, जैसे: "और तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि तुम उसके सिवा किसी की इबादत न करो" (17:23)। यह किसी फ़ैसले को ज़बरदस्ती

mean to settle a right in full as in: 'When Mūsā had fulfilled (qadā) the appointed term' (28:29), and it can also mean 'to will', meaning 'to decide or want' as in: 'When He decides on (qadā) something, He just says to it, "Be!" and it is.' (40:67) Ibn ʿAṭiyyah says it means 'determine'. According to the people of the Sunnis, the āyah has both meanings: He determined it before time and then carried it out. According to the Muʿtazilites: He determined when He created and brought into existence.	नाफ़िज़ कर देने के मआनी में भी आता है, इसी वजह से फ़ैसला करने वाले को क़ाज़ी कहा जाता है। यह किसी हक़ को पूरा कर देने के मआनी में भी आता है, जैसे: "जब मूसाؑ ने मुक़र्ररा मियाद पूरी कर ली" (28:29); और यह "इरादा करना" के मआनी में भी आता है, यानी "फ़ैसला करना" या "चाहना", जैसे: "जब वह किसी चीज़ का फ़ैसला करता है तो बस उसे कहता है: हो जा, और वह हो जाती है" (40:67)। इब्न-ए-अतिय्याؒ कहते हैं कि इसका मानी "मुतअय्यन करना" है। अहल-ए-सुन्नत के नज़दीक इस आयत में दोनों मआनी जमा हैं: अल्लाह ने चीज़ को वक़्त से पहले मुतअय्यन किया, फिर उसे नाफ़िज़ किया। जबकि मुअतज़िला के नज़दीक: उसने उसी वक़्त मुतअय्यन किया जब उसे पैदा किया और वजूद में लाया।
The word translated here as 'something' (amr), which generally means a command or a matter, is used in the Qur'an in different ways to mean various things: Islam: 'Until the truth came and Allah's	यहाँ जिस शब्द का अनुवाद "चीज़" किया गया है (अमर), जिसके सामान्य अर्थ हुक्म या मामला के हैं, वह क़ुरआन-ए-मजीद में अलग-अलग मौक़ों पर अलग-अलग मआनी के लिए इस्तेमाल हुआ है। कभी इससे मुराद दीन-ए-इस्लाम होता है,

command prevailed' (9:48), meaning here the dīn of Islam; word: 'When Our command comes' and 'they argued among themselves about the matter.' (20:62); punishment: 'When the affair is decided' (14:22) meaning the punishment becomes mandatory; the Prophet ʿĪsā: Allah says: 'When He decides on something' (3:47) meaning, in this instance, ʿĪsā, whom He knew would be born without having had a father; the killing of the unbelievers at Badr: Allah says: 'When Allah's command comes' (40:78), meaning the killing which would take place at Badr. And again: 'So that Allah could settle a matter whose result was preordained' (8:42) referring to the killing of the unbelievers of Makkah; the conquest of Makkah: Allah says: 'Wait until Allah brings about His command' (9:24), meaning the Conquest of Makkah; the killing of the Jewish tribe of Qurayẓah and the nobles of the	जैसा कि फ़रमाया गया: "यहाँ तक कि हक़ आ गया और अल्लाह का हुक्म ग़ालिब हो गया" (9:48); कभी इससे क़ौल या बात मुराद होती है, जैसे: "जब हमारा हुक्म आ जाए" और "वे आपस में उस मामले पर झगड़ पड़े" (20:62); कभी इससे अज़ाब मुराद लिया जाता है, जैसे: "जब मामले का फ़ैसला हो जाए" (14:22); कभी यह ख़ास तौर पर हज़रत ईसा के लिए आता है, जैसे: "जब वह किसी चीज़ का फ़ैसला करता है" (3:47), यानी ईसा की पैदाइश; कभी इससे बद्र में कुफ़्फ़ार का क़त्ल मुराद होता है, जैसे: "जब अल्लाह का हुक्म आ जाए" (40:78) और "ताकि अल्लाह उस मामले को पूरा करे जिसका अंजाम पहले से मुक़र्रर था" (8:42); कभी यह फ़त्ह-ए-मक्का के मआनी में आता है, जैसे: "इंतज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह अपना हुक्म ले आए" (9:24); कभी यह यहूदी क़बाइल कुरैज़ा और नज़ीर के बारे में इस्तेमाल होता है, जैसे: "माफ़ करो और दरगुज़र करो यहाँ तक कि अल्लाह अपना हुक्म दे" (2:109); कभी इससे क़ियामत मुराद होती है, जैसे: "अल्लाह का हुक्म आ कर रहेगा" (16:1); कभी यह तक़दीर

tribe of an-Naḍīr: Allah says: ‘Pardon and overlook until Allah gives His command’ (2:109), referring to the Jewish enemies of the Muslims in Madīnah; the Day of Rising: Allah says: ‘Allah’s command is coming.’ (16:1); the Decree: Allah says: ‘He directs the whole affair’ (10:3), meaning what He has decreed; Revelation: Allah says: ‘He directs the whole affair from heaven to earth.’ (32:5) Revelation descends from heaven to earth. And He says: ‘The Command descending down through all of them’ (65:12), meaning Divine Revelation; command over creation: Allah says: ‘Indeed all matters return eventually to Him’ (42:53), meaning the affairs of every creature; victory: Allah says: ‘They say, “Do we have any say in the affair at all?”’ (3:154), meaning victory. ‘The affair belongs entirely to Allah’ (3:154), meaning victory; wrong action: Allah says: ‘They tasted the	के मआनी में आता है, जैसे: “वह सारे मामले की तदबीर करता है” (10:3); कभी इससे वही मुराद होती है, जैसे: “वह आसमान से ज़मीन तक हुक्म नाज़िल करता है” (32:5) और “वह हुक्म जो उन सब के दरमियान नाज़िल होता है” (65:12); कभी यह तमाम मख़लूक़ात के उमूर पर अल्लाह के इख़्तियार के लिए आता है, जैसे: “यक़ीनन तमाम मामले आख़िरकार उसी की तरफ़ लौटते हैं” (42:53); कभी इससे फ़त्ह व नुसरत मुराद होती है, जैसे: “क्या इस मामले में हमारा कुछ इख़्तियार है?” और “यह मामला सरासर अल्लाह ही के इख़्तियार में है” (3:154); कभी यह बुरे आमाल के अंजाम के लिए आता है, जैसे: “उन्होंने अपने आमाल के बुरे नतीजे चखे” (65:9); और कभी इससे अमल और तरीक़ा मुराद होता है, जैसे: “फ़िरऔन का हुक्म दुरुस्त न था” (11:97) और “जो लोग उसके हुक्म की मुख़ालफ़त करते हैं उन्हें डरना चाहिए” (24:63), यानी नबी ﷺ के अमल और तरीक़े की मुख़ालफ़त।

evil consequences of what they did (amrihim)' (65:9), meaning the repayment for their wrong actions; action: Allah says: 'Pharaoh's command was not rightly guided' (11:97); and He says: 'Those who oppose His command should beware' (24:63), meaning the action of the Prophet ﷺ.	
The Divine command 'kun' (Be!) is what is meant by the words of the Prophet ﷺ, 'I seek refuge in the complete Word (or Words) of Allah from the evil of what He created.' This is also indicated in what is related by Abū Dharr from the Prophet ﷺ that Allah said in a ḥadīth qudsī: 'My gift is words and My punishment is words.' At-Tirmidhī transmitted it in a long hadith. So 'word' can mean 'words', but when one word is used for different matters at different times, it becomes words, even if it goes back to one word.	अल्लाह का इलाही हुक्म "कुन" (हो जा) ही वह मानी है जिसकी तरफ़ नबी ﷺ के इस फ़रमान में इशारा है: "मैं अल्लाह के कामिल कलिमा (या कलिमात) की पनाह लेता हूँ उसकी मख़लूक़ के शर से"। इसी की ताईद उस रिवायत से भी होती है जो अबू ज़र्रؓ ने नबी ﷺ से नक़्ल की है कि अल्लाह तआला ने हदीस-ए-क़ुदसी में फ़रमाया: "मेरा अता करना कलिमात के ज़रिये है और मेरा अज़ाब भी कलिमात के ज़रिये है"। इसे इमाम तिर्मिज़ीؒ ने एक तवील हदीस में रिवायत किया है। चुनाँचे "कलिमा" कभी वाहिद के मआनी में आता है और कभी "कलिमात" के मआनी में, और जब एक ही लफ़्ज़ मुख़्तलिफ़ औक़ात में मुख़्तलिफ़ उमूर के लिए इस्तेमाल हो तो वह

	कलिमात बन जाता है, अगरचे असल में वह एक ही कलिमा की तरफ़ लौटता है।
Depending on how the grammar is taken, there are two possible ways of looking at the phrase *fa-yakūnu* (‘and it is’). The first is that the thing comes into being after the command. Even if it was non-existent, it has the same status as something existent, because Allah already ‘knew’ it as will be explained. According to the second view, the thing comes into being simultaneously with the command, and at-Ṭabarī preferred that. He said, ‘His command to the thing does not have prior or later existence.’ The thing commanded to exist only exists by the command, and there is nothing which exists except that it has been commanded to exist, as will be explained. He said, ‘It is like when people rise from their graves. Allah’s summons (30:25) is neither earlier nor later, it is at the moment when He calls them.’ Ibn ʿAṭiyyah	नहवी ऐतिबार से जुमला फ-यकूनु (“और वह हो जाती है”) को समझने के दो मुमकिन तरीक़े हैं। पहला यह कि चीज़ हुक्म के बाद वुजूद में आती है। अगरचे वह पहले मअदूम थी, लेकिन चूँकि अल्लाह के इल्म में पहले से मालूम थी, इसलिए वह मौजूद के हुक्म में शुमार होती है, जैसा कि आगे वज़ाहत आएगी। दूसरे क़ौल के मुताबिक़ चीज़ हुक्म के साथ ही ब-यक-वक़्त वुजूद में आती है, और इमाम तबरीؒ ने इसी क़ौल को तरजीह दी है। उन्होंने कहा: “किसी चीज़ के लिए अल्लाह का हुक्म न पहले होता है न बाद में।” जिस चीज़ को वुजूद में आने का हुक्म दिया जाता है वह सिर्फ़ उसी हुक्म के ज़रिये मौजूद होती है, और कोई भी चीज़ ऐसी नहीं जो बिना हुक्म के वुजूद में आई हो, जैसा कि आगे बयान किया जाएगा। उन्होंने कहा: “यह उस वक़्त की मानिंद है जब लोग क़ब्रों से उठाए जाएँगे। अल्लाह की पुकार **(30:25)** न पहले होगी न बाद में, बल्कि ऐन उसी लम्हे होगी जिस लम्हे वह उन्हें बुलाएगा।” इब्न-

says this is weak and incorrect in respect of the meaning because it would necessitate the word to be accompanied by bringing into being and existence.	ए-अतिय्या़ कहते हैं कि मआनी के ऐतिबार से यह क़ौल कमज़ोर और नादुरुस्त है, क्योंकि इससे लाज़िम आता है कि लफ़्ज़ ख़ुद वुजूद में लाने और पैदा करने के साथ मुक़ारिन हो जाए।
To summarise what is deduced from this āyah: Allah Almighty continues to command non-existent things to come into existence.	इस आयत से हासिल होने वाले ख़ुलासे के तौर पर यह बात सामने आती है कि अल्लाह तआला लगातार मअदूम चीज़ों को वुजूद में आने का हुक्म देता रहता है।
He decrees and can delay decreed things and He is All-Knowing and can delay known things. The entire āyah demands futurity, required by the things commanded, since temporal things come into being after they were not. All depends on Allah's Power and Knowledge. He is timeless and continues forever. The meaning of the Divine command 'Be!', however, is timeless and connected to the Essence.	वह तक़दीर फ़रमाता है और मुक़र्रर किए गए उमूर में चाहे तो ताख़ीर भी कर देता है, और वह सब कुछ जानने वाला है और मालूम उमूर में भी ताख़ीर कर सकता है। पूरी आयत मुस्तक़बिल की तरफ़ दलालत करती है, क्योंकि जिन चीज़ों को हुक्म दिया जाता है वे ज़मानी होती हैं और अदम के बाद वुजूद में आती हैं। हर चीज़ अल्लाह की क़ुदरत और उसके इल्म पर मौक़ूफ़ है। वह अज़ल से है और हमेशा बाक़ी रहने वाला है। अलबत्ता इलाही हुक्म "हो जा" का मफ़हूम ज़मानी नहीं, बल्कि ज़ात-ए-इलाही से मरबूत और अज़ली है।
Al-Māwardī says, 'It might be asked, "In what state were the things to which He said '"Be"	इमाम मावर्दी़ कहते हैं: "यह सवाल पैदा हो सकता है कि जिन चीज़ों से कहा गया 'हो जा, और वह हो जाती

and it is' – non-existence or existence? If it was in a state of non-existence, it is impossible that He command other than what is commanded, as it is impossible for the command to issue from other than the One who commands. If it is the state of its existence, that state cannot have existence or temporality commanded for it because it is already a temporal existent?" There are three answers to this question:	है', वे किस हालत में थीं: अदम (अस्तित्व-विहीन) की हालत में या वजूद (अस्तित्व) की हालत में**?** अगर वे अदम की हालत में थीं तो यह मुहाल है कि हुक्म किसी और की तरफ़ मुतवज्जेह हो, क्योंकि यह भी मुहाल है कि हुक्म देने वाले के सिवा किसी और से हुक्म सादिर हो। और अगर वे वजूद की हालत में थीं तो उस हालत को वजूद या ज़मानियत का हुक्म देना दुरुस्त नहीं, क्योंकि वे पहले ही ज़मानी मौजूद थीं।" इस सवाल के तीन जवाब दिए गए हैं:
'One is that it is a report from Allah regarding the carrying out of His commands in His existing creation, as when He commanded the tribe of Israel to become apes, in which case it is not about bringing something non-existent into existence.	एक यह कि यह अल्लाह की तरफ़ से अपनी मौजूद मख़लूक़ में अपने अहकाम के निफ़ाज़ की ख़बर है, जैसे जब उसने बनी इस्राईल को बंदर बन जाने का हुक्म दिया, तो इस सूरत में यह किसी मअदूम चीज़ को वजूद में लाने के बारे में नहीं है।
'The second is that Allah knows every being before it is and so the things which do not yet actually exist are already in His prior knowledge of them. So they are similar to what exists and it is permissible to say, "Be!" to them and to	दूसरा यह कि अल्लाह हर चीज़ को उसके वजूद में आने से पहले जानता है, लिहाज़ा जो चीज़ें अभी बिल-फ़ेअल मौजूद नहीं होतीं वे भी उसके साबिक़ इल्म में मौजूद होती हैं। इस एतिबार से वे मौजूद अश्या के मुशाबेह होती हैं, और उनसे यह

command them to emerge from the state of non-existence to the state of existence, since He has conceived of them and has knowledge of them in the state of non-existence.	कहना दुरुस्त है: “हो जा”, और उन्हें अदम की हालत से वजूद की हालत में आने का हुक्म देना जायज़ है, क्योंकि अल्लाह ने उन्हें पहले ही तसव्वुर में रखा है और अदम की हालत में भी उनका इल्म रखता है।
‘The third is that it is a general report from Allah about what He brings into being and forms when He desires to create it and bring it into being. It is His Decree which is designated by the word “Be!”, even if it is not an actual word.’	तीसरा यह कि यह अल्लाह की तरफ़ से एक आम बयान है इस बारे में कि जब वह किसी चीज़ को पैदा करना और वजूद में लाना चाहता है तो उसे किस तरह वजूद बख़्शता है। चुनाँचे “हो जा” उसकी तक़दीर और फ़ैसले की ताबीर है, अगरचे वह हक़ीक़ी लफ़्ज़ के तौर पर न भी हो।
Those who do not know say, ‘If only Allah would speak to us, or some sign come to us!’ just like those before them who said the same as they say. Their hearts are much the same. We have made the Signs clear for people who have certainty. [2:118]	**जो लोग इल्म नहीं रखते, वे कहते हैं: “काश अल्लाह हम से ख़ुद कलाम करता, या हमारे पास कोई निशानी आ जाती!” बिल्कुल उसी तरह जैसे उनसे पहले लोगों ने कहा था, वैसी ही बात ये भी कहते हैं। उनके दिल एक जैसे हैं। हमने यक़ीन रखने वालों के लिए निशानियाँ ख़ूब वाज़ेह कर दी हैं। [2:118]**
Ibn ʿAbbās said that *‘those who do not know’* are the Jews while Mujāhid said that it is the Christians who are being referred to, which at-Ṭabarī	इब्न् अब्बास ने कहा कि “जो लोग इल्म नहीं रखते” से मुराद यहूदी हैं, जबकि मुजाहिद ने कहा कि इससे मुराद ईसाई हैं, और इमाम तबरी ने इसी क़ौल को तरजीह दी है, क्योंकि

prefers because they are mentioned immediately before this āyah. Ar-Rabīʿ, as-Suddī and Qatādah say that it is the Arab idolaters who said these words, claiming that they would become believers if this were to happen. *'Their hearts are much the same'* as the hearts of those before them in respect of obstinacy, brashness and lack of faith. Al-Farrāʾ said that it is because they agree in disbelief.	इस आयत से फ़ौरन पहले उन्हीं का ज़िक्र आया है। रबीअ, सुद्दी और क़तादह कहते हैं कि ये अल्फ़ाज़ अरब मुश्रिकों के हैं, जिनका दावा था कि अगर ऐसा हो जाए तो वे ईमान ले आएँगे। "उनके दिल एक जैसे हैं" यानी हठधर्मी, बेबाकी और बेईमानी के एतबार से उनके दिल अपने से पहले लोगों के दिलों जैसे ही हैं। फ़र्रा ने कहा कि इसकी वजह यह है कि वे कुफ़्र में एक-दूसरे से मुत्तफ़िक़ हैं।
We have sent you with the Truth, bringing good news and giving warning. Do not ask about the inhabitants of the Blazing Fire. [2:119]	**हमने आपको हक़ के साथ भेजा है—ख़ुशख़बरी सुनाने वाला और ख़बरदार करने वाला बनाकर। और आपसे भड़कती हुई आग वालों के बारे में सवाल नहीं किया जाएगा। [2:119]**
Do not ask about the inhabitants of the Blazing Fire.	**दोज़ख़ वालों के बारे में सवाल न करो।**
Muqātil said that the Prophet ﷺ said, 'If Allah were to send down His violent force on the Jews, they would have faith,' and then Allah revealed this. It is said that the reason for this was that the Prophet was asked	मुक़ातिल ने कहा है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: "अगर अल्लाह यहूदियों पर अपनी सख़्त गिरफ़्त नाज़िल कर दे तो वे ईमान ले आएँगे", फिर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई। यह भी कहा गया है कि इस आयत के नुज़ूल का सबब यह था कि

about the state of his ancestors and this āyah was revealed.	नबी ﷺ से आपके आबा-ओ-अजदाद की हालत के बारे में सवाल किया गया था, तो इसी मौक़े पर यह आयत नाज़िल हुई।
There are two readings of the word ‘ask’. Nāfiʿ has it as *tasʾal*, the apocopate form as a prohibition, meaning ‘Do not ask’. The others have it as *tusʾalu*, ‘You will not be asked’. There are two aspects to the Nāfiʿ reading. One is that it forbids asking about the living person who has disobeyed Allah and disbelieved because their state might change and they might still becomes believers and obedient. The second, which is most likely, is that it forbids asking about those who have died in disbelief and disobedience, making their circumstances grave. It is as you say, ‘Do not ask about so-and-so! He is worse than you can imagine!’	लफ़्ज़ “सवाल करना” की दो क़िराअतें हैं। इमाम नाफ़ेʿ की क़िराअत में यह तस्अलʾ (नही के सिग़े में) है, यानी: “सवाल न करो”। जबकि दूसरी क़िराअतों में यह तुस्अलु है, यानी: “तुमसे सवाल नहीं किया जाएगा”। इमाम नाफ़ेʿ की क़िराअत के दो पहलू बयान किए गए हैं। पहला यह कि इसमें ज़िंदा उस शख़्स के बारे में सवाल करने से मना किया गया है जिसने अल्लाह की नाफ़रमानी और कुफ़्र इख़्तियार किया हो, क्योंकि मुमकिन है उसकी हालत बदल जाए और वह ईमान और इताअत की तरफ़ लौट आए। दूसरा पहलू—जो ज़्यादा क़वी मालूम होता है—यह है कि उन लोगों के बारे में सवाल करने से मना किया गया है जो कुफ़्र और नाफ़रमानी की हालत में मर चुके हों, क्योंकि उनका अंजाम निहायत संगीन है। यह ऐसा ही है जैसे कहा जाए: “फ़लाँ के बारे में मत पूछो! वह तुम्हारे वह्म-ओ-गुमान से भी ज़्यादा बुरा है!”

The Jews and the Christians will never be pleased with you until you follow their religion. Say, 'Allah's guidance is the true guidance.' If you were to follow their whims and desires, after the knowledge that has come to you, you would find no protector or helper against Allah. [2:120]	**यहूदी और ईसाई हरगिज़ तुमसे राज़ी नहीं होंगे, जब तक तुम उनके दीन की पैरवी न करो। कह दो: "अल्लाह ही की हिदायत असल हिदायत है।" और अगर तुमने इस इल्म के आ जाने के बाद उनकी ख़्वाहिशात और माइलानात की पैरवी की, तो अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारे लिए न कोई कारसाज़ होगा और न कोई मददगार। [2:120]**
The Jews and the Christians will never be pleased with you until you follow their religion.	**यहूदी और ईसाई तुमसे हरगिज़ राज़ी नहीं होंगे जब तक तुम उनके दीन की पैरवी न करो।**
Allah is telling His Messenger that it is not the goal of the Jews and Christians to gain faith by their queries about the āyahs. Even if he were to bring them everything they asked for, they would still not be pleased with him. They will not be pleased until he abandons Islam and follows them. The word *millah* (religion) means what Allah has prescribed for His slaves in His Books and on the tongues of His Messengers and so *millah* and *Sharīʿah* are very	अल्लाह तआला अपने रसूल को यह बता रहा है कि यहूदियों और ईसाइयों का आयात के बारे में सवालात करने का मक़सद ईमान हासिल करना नहीं है। अगर आप उनकी हर माँग पूरी भी कर दें, तब भी वे आपसे राज़ी नहीं होंगे। वे उस वक़्त तक राज़ी नहीं होंगे जब तक आप इस्लाम को छोड़कर उनकी पैरवी न करें। मिल्लत (दीन) से मुराद वह तरीक़ा है जो अल्लाह ने अपनी किताबों में और अपने रसूलों की ज़बान के ज़रिए अपने बंदों के लिए मुक़र्रर किया है, इसलिए मिल्लत

similar in meaning. There is a difference between the words *dīn*, *millah* and *sharīʿah*. *Millah* and *sharīʿah* designate what Allah orders His slaves to do and *dīn* is what the slaves actually make of Allah's commands to them.	और शरीअत मआनी के एतिबार से बहुत क़रीब हैं। हालांकि दीन, मिल्लत और शरीअत के अल्फ़ाज़ में फ़र्क़ है: मिल्लत और शरीअत उस चीज़ को ज़ाहिर करते हैं जिसका अल्लाह अपने बंदों को हुक्म देता है, जबकि दीन उस सूरत को ज़ाहिर करता है जो बंदे अल्लाह के अहकाम को अपना कर इख़्तियार करते हैं।
A group of scholars, including Abū Ḥanīfah, ash-Shāfiʿī, Dāwūd and Aḥmad ibn Ḥanbal, hold the view that, according to this āyah, all disbelief constitutes one religion since the Almighty says: *'your religion'*, which is singular, and He says: *'You have your dīn and I have my dīn'* (109:6) and the Prophet ﷺ said, *'The people of two religions do not inherit from one another.'* What is meant is Islam as the Prophet ﷺ also said, *'A Muslim does not inherit from an unbeliever.'* Mālik and Aḥmad in another transmission believe that disbelief consists of several different religions and so a Jew does not inherit from a	उलमा की एक जमाअत—जिनमें इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़िई, दाऊद और इमाम अहमद बिन हंबल शामिल हैं—का मौक़िफ़ यह है कि इस आयत के मुताबिक़ तमाम कुफ़्र एक ही दीन शुमार होता है, क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "उनका दीन" (वाहिद के सिग़े में), और फ़रमाया: "तुम्हारा दीन तुम्हारे लिए और मेरा दीन मेरे लिए" **(109:6)**, और नबी ﷺ ने फ़रमाया: "दो मुख़्तलिफ़ दीनों वाले एक-दूसरे के वारिस नहीं होते।" इससे मुराद इस्लाम है, जैसा कि नबी ﷺ ने यह भी फ़रमाया: "मुसलमान काफ़िर का वारिस नहीं बनता।" इमाम मालिक और इमाम अहमद से एक दूसरी रिवायत के मुताबिक़ कुफ़्र मुख़्तलिफ़ अदयान पर मुश्तमिल है, इसलिए एक यहूदी ईसाई का वारिस नहीं

Christian and neither of them inherit from a Magian, taking the hadith of the Prophet ﷺ literally. The word *millah* here means a multiplicity of beliefs, even though it is singular.	बनता और न ही उनमें से कोई मजूसी का वारिस बनता है, और वे नबी ﷺ की हदीस को उसके ज़ाहिर पर महमूल करते हैं। इस मक़ाम पर लफ़्ज़ मिल्लत अगरचे वाहिद है, लेकिन इससे मुराद मुतअद्दिद अक़ीदात और मज़ाहिब हैं।
Say, 'Allah's guidance is the true guidance.'	**कह दो: "अल्लाह ही की हिदायत असल हिदायत है।"**
This means: 'O Muhammad, what you have of the true guidance of Allah, which He places in the heart of whomever He wishes, is the true guidance, not what these people claim.'	इसका मतलब यह है: ऐ मुहम्मद ﷺ! तुम्हारे पास जो अल्लाह की सच्ची हिदायत है—जिसे वह जिसके दिल में चाहता है रख देता है—वही हकीक़ी हिदायत है, न कि वह जिसका ये लोग दावा करते हैं।
If you were to follow their whims and desires,	**"अगर तुम उनकी इच्छाओं और झुकावों का पालन करो..."**
There are two aspects to the use of the second person here. One is that it is addressed to the Messenger ﷺ alone; and the second is that while it is addressed to the Messenger ﷺ, it is his Community that is meant. According to the first aspect, it means to discipline the Community since their position is less than his. The reason for the āyah was that the	यहाँ संबोधन के प्रयोग (द्वितीय पुरुष) के दो पहलू हैं। एक यह कि इसमें सीधे रसूल अल्लाह ﷺ ही को संबोधित किया गया है; और दूसरा यह कि यद्यपि संबोधन रसूल अल्लाह ﷺ से है, लेकिन अभिप्रेत आपकी उम्मत है। पहले पहलू के अनुसार इसका उद्देश्य उम्मत की तादीब व तनबीह है, क्योंकि उनका दर्जा आपके दर्जे से कम है। इस आयत के नुज़ूल का कारण यह बताया गया है

idolaters were asking for a truce while continuing to attack the Prophet ﷺ and Islam. So Allah informed him that they would not be pleased until he followed their religion and He commanded jihād against them.	कि मुश्रिकीन सुलह की माँग कर रहे थे, जबकि वे नबी ﷺ और इस्लाम के ख़िलाफ़ हमले भी जारी रखे हुए थे। अतः अल्लाह तआला ने आप ﷺ को सूचित किया कि वे उस समय तक राज़ी नहीं होंगे जब तक आप उनके दीन की पैरवी न करें, और इसी आधार पर अल्लाह ने उनके ख़िलाफ़ जिहाद का हुक्म दिया।
after the knowledge that has come to you,	**"उस इल्म के आ जाने के बाद जो तुम्हारे पास आ चुका है,"**
Aḥmad ibn Ḥanbal was asked about the one who says that the Qur'an is created. He said, 'He is an unbeliever.' It was asked, 'On what basis is he an unbeliever?' He said, 'By the āyahs of the Book of Allah: "If you were to follow their whims and desires after the knowledge that has come to you." This shows that the Qur'an is part of Allah's knowledge and so whoever claims it is created is an unbeliever.'	इमाम अहमद बिन हंबल से उस शख़्स के बारे में पूछा गया जो यह कहता है कि क़ुरआन मख़लूक़ (सृष्ट) है। उन्होंने फ़रमाया: "वह काफ़िर है।" पूछा गया: "उसके कुफ़्र की बुनियाद क्या है?" उन्होंने कहा: "अल्लाह की किताब की इन आयतों की बुनियाद पर: 'और अगर तुम उस इल्म के आ जाने के बाद उनकी ख़्वाहिशात और मैलानात की पैरवी करो...' यह इस बात पर दलील है कि क़ुरआन अल्लाह के इल्म का हिस्सा है, इसलिए जो व्यक्ति यह दावा करे कि वह मख़लूक़ है, वह काफ़िर है।"
Those to whom We have given the Book, who recite it in the way it should be	**जिन लोगों को हमने किताब दी है, वे उसे इस तरह पढ़ते हैं जैसे उसकी तिलावत का हक़ है; वही**

recited, such people believe in it. As for those who reject it, they are the losers. [2:121]	**लोग उस पर ईमान रखते हैं। और जो लोग उसका इनकार करें, वही घाटा उठाने वाले हैं। [2:121]**
Those to whom We have given the Book,	**जिन लोगों को हमने किताब दी है—**
Qatādah said that they are the Companions of the Prophet ﷺ and the Book is the Qur'an. Ibn Zayd said, 'They are those of the tribe of Israel who became Muslim, and so the Book is the Torah.' The āyah is, in fact, general.	क़तादहؓ ने कहा कि इससे मुराद नबी ﷺ के सहाबाؓ हैं और यहाँ किताब से मुराद क़ुरआन है। इब्न-ए-ज़ैदؓ ने कहा: इससे मुराद बनी इसराईल के वे लोग हैं जो मुसलमान हो गए, लिहाज़ा यहाँ किताब से मुराद तौरात है। दरहक़ीक़त यह आयत अपने मफ़हूम में आम है।
who recite it in the way it should be recited,	**"जो उसे इस तरह पढ़ते हैं जैसे उसकी तिलावत का हक़ है"—**
There is disagreement about the meaning of the āyah. It is said that it means they follow the Book as it should be followed by obeying its commands and avoiding its prohibitions, observing the ḥudūd and the unlawful and in general acting according to what it contains, as ʿIkrimah said. ʿIkrimah also said, 'In the words of Allah Almighty: "The moon when it follows it" (91:2), the word talā — which in the āyah means "recite" — means "to follow",	इस आयत के मफ़हूम के बारे में इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। कहा गया है कि इसका मतलब यह है कि वे किताब की इस तरह पैरवी करते हैं जैसे पैरवी का हक़ है: उसके अहकाम पर अमल करते हैं, उसकी ममनूआत से बचते हैं, हुदूद और हराम उमूर का लिहाज़ रखते हैं, और मजमूई तौर पर उसमें मौजूद हिदायतों के मुताबिक़ ज़िंदगी गुज़ारते हैं, जैसा कि इकरिमाؓ ने कहा। इकरिमाؓ ने यह भी कहा: अल्लाह तआला के फ़रमान "और चाँद की क़सम जब वह उसके पीछे आए"

and that is what Ibn ʿAbbās and Ibn Masʿūd said.' Ibn ʿUmar said that these words of Allah mean, 'They follow it as it should be followed.' According to al-Khaṭīb Abū Bakr Aḥmad, its isnād contains more than one unknown transmitter, but its meaning is sound. Abū Mūsā al-Ashʿarī said, 'If someone diligently studies the Qur'an, it will bring him into the meadows of Paradise.'	(91:2) में लफ़्ज़ तला—जो इस आयत में "तिलावत करना" के मानी में आया है—दरअसल "पैरवी करना" के मानी में है, और यही बात इब्न-ए-अब्बास ؓ और इब्न-ए-मसऊद ؓ से भी मनक़ूल है। इब्न-ए-उमर ؓ ने कहा कि अल्लाह के इन अल्फ़ाज़ का मतलब यह है: "वे उसकी इस तरह पैरवी करते हैं जैसे पैरवी का हक़ है।" ख़तीब अबू बक्र अहमद ؒ के मुताबिक़ इस रिवायत की सनद में एक से ज़्यादा मजहूल रावी हैं, लेकिन इसका मफ़हूम दुरुस्त है। अबू मूसा अशअरी ؓ ने कहा: "जो शख़्स क़ुरआन का एहतिमाम के साथ मुतालआ करता है, वह उसे जन्नत के बाग़ात में ले जाता है।"
ʿUmar ibn al-Khaṭṭāb said, 'They are those who, when they read an āyah of mercy, ask Allah for it, and when they read an āyah of punishment, seek refuge from it.' This understanding was reported in connection with the Prophet ﷺ. It was said of him that when, in the course of his recitation, he recited an āyah of mercy, he asked for it and when he recited an āyah of punishment, he	हज़रत उमर बिन अल-ख़त्ताब ؓ ने कहा: "ये वे लोग हैं कि जब वे रहमत की कोई आयत पढ़ते हैं तो अल्लाह से उसका सवाल करते हैं, और जब अज़ाब की कोई आयत पढ़ते हैं तो उससे पनाह माँगते हैं।" यही मफ़हूम नबी ﷺ के बारे में भी मनक़ूल है कि आप ﷺ जब तिलावत के दौरान रहमत की आयत पढ़ते तो रहमत माँगते, और अज़ाब की आयत पढ़ते तो पनाह तलब करते थे। हसन बसरी ؒ ने कहा: "ये वे लोग हैं जो

sought refuge from it. Al-Ḥasan said, 'They are those who know its āyahs of judgment, believe its ambiguous āyahs, and entrust what is unclear in them to the Knower.' It is said that it means 'they recite it properly', but this is unlikely, unless it means they pronounce its phrases slowly and understand its meanings. One understands meanings by following them.	उसकी अहकाम वाली आयात को जानते हैं, उसकी मुतशाबेह आयात पर ईमान रखते हैं, और जिन बातों की हक़ीक़त वाज़ेह न हो उन्हें जानने वाले (अल्लाह) के सुपुर्द कर देते हैं।" यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है "वे उसकी सही तिलावत करते हैं", लेकिन यह मफ़हूम कमज़ोर है, अलबत्ता यह कि इससे मुराद यह हो कि वे उसके अल्फ़ाज़ ठहर-ठहर कर अदा करते हैं और उसके मआनी को समझते हैं, क्योंकि मआनी को समझना दरअसल उसकी पैरवी ही से हासिल होता है।